ISSN 0976-528X

सामाजिक एवं मानविकी विषय के अन्तर्गत प्रकाशित

त्रैमासिक राष्ट्रीय शोध जर्नल दिसम्बर 2011

महामहिम (कुलाधिपति) राज्यपाल श्री वी. एल. जोशी जी द्वारा विमोचित

सिद्धांत

DOCTRINE

संपादक

डॉ. विनोद मोहन मिश्रा
डॉ. राम तिवारी

Published by :

Academic Research Society (U.P.)
एकेडेमिक रिसर्च सोसाइटी (उ० प्र०)

एकेडेमिक रिसर्च सोसाइटी परिवार

की ओर से

प्रिय सुधीजन पाठकों

को

आंग्ल नववर्ष

सन् २०१२ की

हार्दिक शुभकामनाएँ

राष्ट्रीय शोध जर्नल 'सिद्धांत' (DOCTRINE) का विमोचन करते हुए

उत्तर प्रदेश के राज्यपाल (कुलाधिपति)

महामहिम श्री वी० एल० जोशी जी

स्थान :	दिनांक : 10.08.2010	समय :
तुलसी उपवन (मोतीझील), कानपुर	दिन : सोमवार	प्रातः 8.50 बजे

चित्र में बायें से कानपुर नगर के महापौर (मेयर) **श्री रवीन्द्र पाटनी जी,** पद्मश्री गिरिराज किशोर जी (प्रख्यात अन्तर्राष्ट्रीय साहित्यकार), महामहिम राज्यपाल (कुलाधिपति) श्री वी० एल० जोशी जी, डॉ० राम तिवारी, (संपादक 'सिद्धांत'), डॉ० बद्री नारायण तिवारी जी, (अध्यक्ष/संयोजक 'मानस संगम'), डॉ० विनोद मोहन मिश्रा, (संपादक 'सिद्धांत'), श्री अभिनव तिवारी, (एकेडमिक रिसर्च सोसाइटी, उ० प्र०)

संपादकीय ....

वर्तमान परिस्थिति संक्रमण के दौर से गुजर रही है। आधुनिक भाषा में इसे परिवर्तन का नाम दिया जा रहा है। किन्तु ऐसे परिवर्तन जो मर्यादाओं से रहित है वह सिर्फ संक्रमण ही माने जा सकते हैं। विकास एवं परिवर्तन के नाम पर जो भी सामयिक प्रयास हो रहा है वह शुरू में तो यशस्वी प्रतीत होता है, किन्तु समय के साथ जितना यह प्रयास आगे बढ़ता है विकास की छवि धीरे–धीरे धूमिल होने लगती है। इसका जीवंत उदाहरण टूजी स्पेक्ट्रम घोटाला है। साइबर विकास को एक नयी गति देने वाले 90 के दशक को स्वर्णयुग कहा जा रहा था जिसने गरीब एवं अमीर के बीच की दूरी को समाप्त कर सबको मोबाइल से जोड़ा उसी मोबाइल युग के 2010 का दशक स्वर्ण युग का काला पन्ना बनकर साबित हुआ है एक साइबर विकास क्रम जो अपने चरम पर है किस प्रकार भ्रष्टाचार के आगोश में है, इसका जीवंत उदाहरण यह टूजी स्पेक्ट्रम घोटाले के दृश्य से स्पष्ट होता है। मोबाइल युग की सम्पर्क क्रान्ति ने जहाँ लोगों के आपसी आवागमन को कम कर आपसी दूरियों को और पास किया है वहीं लोगों में औपचारिकता का विकास हुआ है। लोग आपस में मिलने के स्थान पर मोबाइल से बातचीत करना ही बेहतर मानते हैं। इसी कमजोरी को भांपते हुए मोबाइल कम्पनी ने ग्राहकों से मनमाना पैसा वसूलना शुरू कर दिया एवं इसकी वसूली का एक हिस्सा ताकतवर राजनेता एवं संचार अधिकारियों को पहुँचाकर इस क्षेत्र के अवसरों को पाने की होड़ लगा दी है। इसी व्यावसायिक होड़ ने आम आदमी की जेब को अनैतिक रूप से हल्का करना शुरू कर दिया है। जिसका अन्त हो पाना सम्भव नहीं दिख रहा है।

अंग्रेजी नववर्ष 2012 के शुभारम्भ में यह अब आपके समक्ष होगा। इस वर्ष की शुरुआत अन्ना के आन्दोलन से प्रेरित है। अन्ना एवं स्वामी रामदेव द्वारा उठाये गये विषय एवं लोकपाल पर राष्ट्रीय बहस किसी भ्रष्टाचार को समाप्त करेगी, यह कहना हास्यास्पद है; क्योंकि जब तक नैतिक मूल्यों का जागरण प्रत्येक भारतीय नागरिक के मन में नहीं होता है तब तक इस तरह के आन्दोलन सिर्फ खबर (समाचार) बनकर रह जाते हैं और हर दूसरे दिन बासी अखबार बनाकर रख दिये जाते हैं; किन्तु फिर भी यह आन्दोलन आम आदमी का सिस्टम के गाल पर एक तमाचा है जो अति आवश्यक है।

''सिद्धान्त'' जनरल का 2011 वर्ष का अन्तिम दिसम्बर अंक आप तक पहुँचाते हुए मुझे अत्यन्त वर्ष हो रहा है कि आपका यह ''सिद्धान्त'' जनरल शनै–शनै अपने उत्तरोत्तर प्रगति की ओर अग्रसर हो रहा है, जिसको परिवार के सभी शोधार्थियों का सहयोग सान्निध्य महत्त्वपूर्ण है। सभी को सादर धन्यवाद। इस वर्ष के प्रारम्भ में ही यह जनरल ''ऑनलाइन'' वेबसाइट के रूप में किया जायेगा, जिससे अब समय के साथ आपके पास अतिशीघ्र पहुँच जाये। इसी क्रम में सम्पादक मण्डल एवं परामर्श दाता मण्डल की सहमति से ''सिद्धान्त'' जनरल की आजीवन सदस्यता प्रारम्भ की है। जिसमे आपकी सहभागिता हमारे विश्वास को और अधिक बल प्रदान करेगी हमारी अपेक्षा होगी।

प्रस्तुत अंक में विचार / शोधपूर्ण लेख लेखकों के स्वयं के हैं, उसके सम्बन्ध में जर्नल का कोई विधिक उत्तरदायित्व नहीं है। इस अंक के प्रति विचार एवं सुझाव हमें अवश्य भेजें, उन्हें अगले अंक में ''अभिमत'' कालम में प्रकाशित किया जायेगा।

-डॉ० विनोद मोहन मिश्रा
डॉ० राम तिवारी

संपादक - मण्डल

1. **डॉ० (मेजर) संतोष कुमार सिंह सेंगर**
एसोसिएट प्रोफेसर एवं अध्यक्ष
रक्षा एवं स्त्रातेजिक अध्ययन विभाग
वी0एस0एस0डी0 महाविद्यालय, कानपुर

2. **डॉ० गोविन्द सिंह**
एसोसिएट प्रोफेसर
रक्षा एवं स्त्रातेजिक अध्ययन विभाग
वी0एस0एस0डी0 महाविद्यालय, कानपुर

3. **डॉ० (मेजर) इन्द्रजीत सिंह**
रीडर एवं अध्यक्ष
सैन्य अध्ययन विभाग
पी0पी0एन0 महाविद्यालय, कानपुर

4. **डॉ० अशोक कुमार तिवारी**
एसोसिएट प्रोफेसर
रक्षा एवं स्त्रातेजिक अध्ययन विभाग
वी0एस0एस0डी0 महाविद्यालय, कानपुर

5. **डॉ० ममता दीक्षित**
असिस्टेंट प्रोफेसर (सीनियर ग्रेड)
शिक्षाशास्त्र विभाग
महिला महाविद्यालय, कानपुर

6. **डॉ० देवेश चन्द्र कटियार**
एसोसिएट प्रोफेसर
सैन्य अध्ययन विभाग
पी0पी0एन0 महाविद्यालय, कानपुर

7. **डॉ० अजय कुमार सिंह**
वरिष्ठ प्रवक्ता
सैन्य अध्ययन विभाग
पी0पी0एन0 महाविद्यालय, कानपुर

8. **डॉ० जय शंकर पाण्डेय**
एसोसिएट प्रोफेसर एवं अध्यक्ष
समाजशास्त्र विभाग
डी0ए—वी0 महाविद्यालय, कानपुर

9. **डॉ० अनूप सिंह**
असिस्टेंट प्रोफेसर (सीनियर ग्रेड)
समाजशास्त्र विभाग
डी0ए—वी0 महाविद्यालय, कानपुर

10. **डॉ० मनोज अवस्थी**
एसोसिएट प्रोफेसर
वाणिज्य विभाग
वी0एस0एस0डी0 महाविद्यालय, कानपुर

11. **डॉ० नीलम त्रिवेदी**
एसोसिएट प्रोफेसर
डी0जी0 महाविद्यालय, कानपुर

12. **डॉ० पुष्पा वर्मा**
एसोसिएट प्रोफेसर
डी0सी0लॉ0 महाविद्यालय, कानपुर

संपादकीय परामर्शदाता मण्डल

1. **प्रोफेसर (डॉ०) राजकुमार उपाध्याय**
विभागाध्यक्ष
रक्षा एवं स्त्रातेजिक अध्ययन विभाग
इलाहाबाद विश्वविद्यालय, इलाहाबाद

2. **डॉ० सुरेन्द्र कुमार मिश्रा**
एसोसिएट प्रोफेसर एवं अध्यक्ष
सैन्य अध्ययन विभाग
गर्वनमेण्ट पी0जी0 कालेज, हिसार (हरियाणा)

3. **डॉ० रामसूरत पाण्डेय**
एसोसिएट प्रोफेसर
रक्षा अध्ययन विभाग
लाल बहादुर शास्त्री महाविद्यालय, गोण्डा

4. **डॉ० विजेन्द्र सिंह**
विभागाध्यक्ष
सैन्य अध्ययन विभाग
सकलडीहा पी0जी0 कालेज सकलडीहा, चंदौली
वाराणसी

5. **डॉ० अरविन्द कुमार चतुर्वेदी**
एसोसिएट प्रोफेसर
सैन्य अध्ययन विभाग
गनपत सहाय पी0जी0 कालेज, सुल्तानपुर

6. **डॉ० संजय कुमार**
वरिष्ठ प्रवक्ता
सैन्य अध्ययन विभाग
मेरठ कालेज, मेरठ

7. **डॉ० नर्वदेश्वर शुक्ला**
विभागाध्यक्ष
सैन्य विज्ञान विभाग
एल0एस0एम0 राजकीय स्नातकोत्तर महाविद्यालय
पिथौरागढ़ (उ0 प्र0)

8. **डॉ० एस० एन० राय**
विभागाध्यक्ष
सैन्य अध्ययन विभाग
लखनऊ विश्वविद्यालय, लखनऊ

9. **डॉ० धीरेन्द्र द्विवेदी**
असिस्टेंट प्रोफेसर
रक्षा एवं स्त्रातेजिक अध्ययन विभाग
ईश्वर शरण डिग्री कालेज,
इलाहाबाद विश्वविद्यालय, इलाहाबाद

10. **डॉ० गिरीश कांत पाण्डेय**
विभागाध्यक्ष,
रक्षा अध्ययन विभाग
शास. नागार्जुन स्नातकोत्तर विज्ञान
महाविद्यालय, रायपुर (छत्तीसगढ़)

11. **डॉ० देवदत्त शर्मा**
एसोसिएट प्रोफेसर
विधि विभाग
डी0ए—वी0 कालेज, लखनऊ

12. **डॉ० अमित सिंह**
एसोसिएट प्रोफेसर
विधि विभाग
महात्मा ज्योतिबा फूले
रुहेलखण्ड विश्वविद्यालय, बरेली

13. **डॉ० दीर्घपाल सिंह भंडारी**
विभागाध्यक्ष
सैन्य विज्ञान विभाग
राजकीय स्नातकोत्तर महाविद्यालय,
नई टिहरी, गढ़वाल (उत्तराखण्ड)

14. **डॉ० संजय राय**
एसोसिएट प्रोफेसर
समाज कार्य विभाग
इन्दिरा गांधी राष्ट्रीय मुक्त विश्वविद्यालय (IGNOU)
नई दिल्ली

संरक्षक - मण्डल

- **डॉ० बद्री नारायण तिवारी**
  अध्यक्ष,
  मानस संगम

- **डॉ० जे० एन० गुप्ता**
  CEO दैनिक जागरण एजूकेशन फाउन्डेशन एवं पूर्व चेयरमैन स्टाक एक्सचेंज, उत्तर प्रदेश

- **डॉ० आर. के. त्रिवेदी**
  निदेशक
  एच० बी० टी० आई० (स्टेप)
  नवाबगंज, कानपुर

- **डॉ० रमेशचन्द्र शर्मा**
  पूर्व एसोसिएट प्रोफेसर
  हिन्दी विभाग
  बी० एस० एस० डी० कालेज, कानपुर

- **श्रीमती किरन मिश्रा**
  उप–महाप्रबन्धक
  ब्रह्मवर्त कामर्शियल कोआपरेटिव बैंक लिमिटेड, कानपुर

- **श्रीमती पुष्पलता सिंह**
  प्रधानाचार्या
  डॉ० वीरेन्द्र स्वरूप मेमोरियल पब्लिक स्कूल, कानपुर

- **ई० आर० डी० पाण्डेय**
  विशेष कार्याधिकारी
  केस्को, कानपुर

- **डॉ० नंदिनी रस्तोगी**
  प्रख्यात चिकित्सक
  कानपुर नगर

- **प्रो० (डॉ०) आर० सी० गुप्ता**
  अध्यक्ष, नेत्र रोग विभाग
  कानपुर मेडिकल कालेज
  कानपुर

- **प्रो० सर्वज्ञ सिंह कटियार**
  पद्मश्री एवं पद्म विभूषण
  पूर्व कुलपति
  छत्रपति शाहू जी महाराज विश्वविद्यालय
  कानपुर

- **श्री के० के० यादव** (आई० पी० एस०)
  निदेशक, डाक सेवा
  अंडमान निकोबार, पोर्ट ब्लेयर

- **डॉ० विवेक द्विवेदी**
  प्राचार्य
  बी० एन० डी० महाविद्यालय, कानपुर

- **श्री अंकुश शुक्ला**
  भाई साहब (दैनिक जागरण)
  प्रख्यात व्यंग्य कार्टूनिस्ट, कानपुर

- **डॉ० अरविन्द अरोड़ा**
  प्रख्यात लेखक एवं
  पूर्व चिकित्साधिकारी (होम्योपैथिक)
  कानपुर

- **श्री प्रकाश नारायण बाजपेई**
  प्रधानाचार्य
  पं० दीनदयाल उपाध्याय इण्टर कालेज
  कानपुर

- **डॉ० डी० के० सिन्हा**
  प्रख्यात चिकित्सक
  संस्थापक, कानपुर किडनी फाउन्डेशन
  कानपुर

- **प्रो० (डॉ०) एस० के० अरोड़ा**
  त्वचा रोग विशेषज्ञ
  कानपुर मेडिकल कालेज, कानपुर

- **डॉ० एस० पी० तिवारी**
  पूर्व प्रधानाचार्य
  आर० एस० जी० यू० डिग्री कालेज
  पुखरायाँ

- **श्री साहब लाल मौर्या**
  रजिस्टार
  महात्मा गांधी काशी विद्यापीठ
  विश्वविद्यालय, वाराणसी

- **श्री योगेन्द्र स्वरूप (एड०)**
  सचिव, पी० पी० एन० मेमोरियल सोसाइटी, कानपुर, वर्तमान सदस्य एवं पूर्व अध्यक्ष उत्तर प्रदेश बार काउंसिल

- **डॉ० रेनू निगम**
  एसोसिएट प्रोफेसर एवं अध्यक्ष
  संगीत विभाग,
  ए० एन० डी० कालेज, कानपुर

- **डॉ० अरुण कुमार दीक्षित**
  प्राचार्य
  श्री वार्ष्णेय डिग्री कालेज,
  अलीगढ़

- **श्री राम मिलन सिंह**
  प्रधानाचार्य
  ओंकारेश्वर सरस्वती विद्या निकेतन
  इण्टर कालेज, कानपुर

- **श्री रमेश कुमार पाण्डेय**
  चेयरमैन
  विजन ग्रुप ऑफ इंजीनिरिंग एण्ड मैनेजमैण्ट इंस्टीट्यूट उत्तर प्रदेश

- **डॉ० एम० के० खरे**
  पूर्व चिकित्सा अधिकारी
  एवं प्रबन्धक सीता पैथोलॉजी,
  स्वरूप नगर, कानपुर

- **प्रो० (डॉ०) संजय रस्तोगी**
  वरिष्ठ चिकित्सक
  सर्जन एवं हड्डी रोग विशेषज्ञ, कानपुर

- **श्री राजू सेठ**
  प्रख्यात छायाकार एवं प्रबन्धक
  वाहु कलर लैब सोमदत्त प्लाजा,
  कानपुर

संपादक - मण्डल

1. **डॉ० (मेजर) संतोष कुमार सिंह सेंगर**
एसोसिएट प्रोफेसर एवं अध्यक्ष
रक्षा एवं स्त्रातेजिक अध्ययन विभाग
वी0एस0एस0डी0 महाविद्यालय, कानपुर

2. **डॉ० गोविन्द सिंह**
एसोसिएट प्रोफेसर
रक्षा एवं स्त्रातेजिक अध्ययन विभाग
वी0एस0एस0डी0 महाविद्यालय, कानपुर

3. **डॉ० (मेजर) इन्द्रजीत सिंह**
रीडर एवं अध्यक्ष
सैन्य अध्ययन विभाग
पी0पी0एन0 महाविद्यालय, कानपुर

4. **डॉ० अशोक कुमार तिवारी**
एसोसिएट प्रोफेसर
रक्षा एवं स्त्रातेजिक अध्ययन विभाग
वी0एस0एस0डी0 महाविद्यालय, कानपुर

5. **डॉ० ममता दीक्षित**
असिस्टेंट प्रोफेसर (सीनियर ग्रेड)
शिक्षाशास्त्र विभाग
महिला महाविद्यालय, कानपुर

6. **डॉ० देवेश चन्द्र कटियार**
एसोसिएट प्रोफेसर
सैन्य अध्ययन विभाग
पी0पी0एन0 महाविद्यालय, कानपुर

7. **डॉ० अजय कुमार सिंह**
वरिष्ठ प्रवक्ता
सैन्य अध्ययन विभाग
पी0पी0एन0 महाविद्यालय, कानपुर

8. **डॉ० जय शंकर पाण्डेय**
एसोसिएट प्रोफेसर एवं अध्यक्ष
समाजशास्त्र विभाग
डी0ए—वी0 महाविद्यालय, कानपुर

9. **डॉ० अनूप सिंह**
असिस्टेंट प्रोफेसर (सीनियर ग्रेड)
समाजशास्त्र विभाग
डी0ए—वी0 महाविद्यालय, कानपुर

10. **डॉ० मनोज अवस्थी**
एसोसिएट प्रोफेसर
वाणिज्य विभाग
वी0एस0एस0डी0 महाविद्यालय, कानपुर

11. **डॉ० नीलम त्रिवेदी**
एसोसिएट प्रोफेसर
डी0जी0 महाविद्यालय, कानपुर

12. **डॉ० पुष्पा वर्मा**
एसोसिएट प्रोफेसर
डी0सी0लॉ0 महाविद्यालय, कानपुर

संपादकीय परामर्शदाता मण्डल

1. **प्रोफेसर (डॉ०) राजकुमार उपाध्याय**
विभागाध्यक्ष
रक्षा एवं स्त्रातेजिक अध्ययन विभाग
इलाहाबाद विश्वविद्यालय, इलाहाबाद

2. **डॉ० सुरेन्द्र कुमार मिश्रा**
एसोसिएट प्रोफेसर एवं अध्यक्ष
सैन्य अध्ययन विभाग
गर्वनमेण्ट पी0जी0 कालेज, हिसार (हरियाणा)

3. **डॉ० रामसूरत पाण्डेय**
एसोसिएट प्रोफेसर
रक्षा अध्ययन विभाग
लाल बहादुर शास्त्री महाविद्यालय, गोण्डा

4. **डॉ० विजेन्द्र सिंह**
विभागाध्यक्ष
सैन्य अध्ययन विभाग
सकलडीहा पी0जी0 कालेज सकलडीहा, चंदौली
वाराणसी

5. **डॉ० अरविन्द कुमार चतुर्वेदी**
एसोसिएट प्रोफेसर
सैन्य अध्ययन विभाग
गनपत सहाय पी0जी0 कालेज, सुल्तानपुर

6. **डॉ० संजय कुमार**
वरिष्ठ प्रवक्ता
सैन्य अध्ययन विभाग
मेरठ कालेज, मेरठ

7. **डॉ० नर्वदेश्वर शुक्ला**
विभागाध्यक्ष
सैन्य विज्ञान विभाग
एल0एस0एम0 राजकीय स्नातकोत्तर महाविद्यालय
पिथौरागढ़ (उ0 प्र0)

8. **डॉ० एस० एन० राय**
विभागाध्यक्ष
सैन्य अध्ययन विभाग
लखनऊ विश्वविद्यालय, लखनऊ

9. **डॉ० धीरेन्द्र द्विवेदी**
असिस्टेंट प्रोफेसर
रक्षा एवं स्त्रातेजिक अध्ययन विभाग
ईश्वर शरण डिग्री कालेज,
इलाहाबाद विश्वविद्यालय, इलाहाबाद

10. **डॉ० गिरीश कांत पाण्डेय**
विभागाध्यक्ष,
रक्षा अध्ययन विभाग
शास. नागार्जुन स्नातकोत्तर विज्ञान
महाविद्यालय, रायपुर (छत्तीसगढ़)

11. **डॉ० देवदत्त शर्मा**
एसोसिएट प्रोफेसर
विधि विभाग
डी0ए—वी0 कालेज, लखनऊ

12. **डॉ० अमित सिंह**
एसोसिएट प्रोफेसर
विधि विभाग
महात्मा ज्योतिबा फूले
रुहेलखण्ड विश्वविद्यालय, बरेली

13. **डॉ० दीर्घपाल सिंह भंडारी**
विभागाध्यक्ष
सैन्य विज्ञान विभाग
राजकीय स्नातकोत्तर महाविद्यालय,
नई टिहरी, गढ़वाल (उत्तराखण्ड)

14. **डॉ० संजय राय**
एसोसिएट प्रोफेसर
समाज कार्य विभाग
इन्दिरा गांधी राष्ट्रीय मुक्त विश्वविद्यालय (IGNOU)
नई दिल्ली

संरक्षक - मण्डल

❖ **प्रो० सर्वज्ञ सिंह कटियार**
पद्मश्री एवं पद्म विभूषण
पूर्व कुलपति, छत्रपति शाहू जी महाराज
विश्वविद्यालय, कानपुर

❖ **डॉ० बद्री नारायण तिवारी**
अध्यक्ष,
मानस संगम

❖ **डॉ० जे० एन० गुप्ता**
CEO दैनिक जागरण एजूकेशन
फाउन्डेशन एवं पूर्व चेयरमैन स्टाक
एक्सचेंज, उत्तर प्रदेश

❖ **डॉ० आर. के. त्रिवेदी**
निदेशक
एच० बी० टी० आई० (स्टेप)
नवाबगंज, कानपुर

❖ **डॉ० रमेशचन्द्र शर्मा**
पूर्व एसोसिएट प्रोफेसर
हिन्दी विभाग
बी० एस० एस० डी० कालेज, कानपुर

❖ **श्रीमती किरन मिश्रा**
उप महाप्रबन्धक
ब्रह्मवर्त कामर्शियल कोआपरेटिव बैंक
लिमिटेड, कानपुर

❖ **श्रीमती पुष्पलता सिंह**
प्रधानाचार्या
डॉ० वीरेन्द्र स्वरूप मेमोरियल पब्लिक
स्कूल, कानपुर

❖ **ई० आर० डी० पाण्डेय**
विशेष कार्याधिकारी
केस्को, कानपुर

❖ **डॉ० नंदिनी रस्तोगी**
प्रख्यात चिकित्सक
कानपुर नगर

❖ **डॉ० विवेक द्विवेदी**
प्राचार्य
बी० एन० डी० महाविद्यालय, कानपुर

❖ **श्री के० के० यादव (आई० पी० एस०)**
निदेशक, डाक सेवा
अंडमान निकोबार, पोर्ट ब्लेयर

❖ **श्री अंकुश शुक्ला**
भाई साहब (दैनिक जागरण)
प्रख्यात व्यंग्य कार्टूनिस्ट

❖ **डॉ० अरविन्द अरोड़ा**
प्रख्यात लेखक एवं
पूर्व चिकित्साधिकारी (होम्योपैथिक)
कानपुर

❖ **श्री प्रकाश नारायण बाजपेई**
प्रधानाचार्य
पं० दीनदयाल उपाध्याय इण्टर कालेज
कानपुर

❖ **डॉ० डी० के० सिन्हा**
प्रख्यात चिकित्सक
संस्थापक, कानपुर किडनी फाउन्डेशन
कानपुर

❖ **प्रो० (डॉ०) एस० के० अरोड़ा**
त्वचा रोग विशेषज्ञ
कानपुर मेडिकल कालेज, कानपुर

❖ **डॉ० एस० पी० तिवारी**
पूर्व प्रधानाचार्य
आर० एस० जी० यू० डिग्री कालेज
पुखरायाँ

❖ **प्रो० (डॉ०) आर० सी० गुप्ता**
अध्यक्ष, नेत्र रोग विभाग
कानपुर मेडिकल कालेज
कानपुर

❖ **श्री साहब लाल मौर्या**
रजिस्टार
महात्मा गांधी काशी विद्यापीठ
विश्वविद्यालय, वाराणसी

❖ **श्री योगेन्द्र स्वरूप (एड०)**
सचिव, पी० पी० एन० मेमोरियल सोसाइटी,
कानपुर, वर्तमान सदस्य एवं पूर्व
अध्यक्ष उत्तर प्रदेश बार काउंसिल

❖ **डॉ० रेनू निगम**
एसोसिएट प्रोफेसर एवं अध्यक्ष
संगीत विभाग,
ए० एन० डी० कालेज, कानपुर

❖ **डॉ० अरुण कुमार दीक्षित**
प्राचार्य
श्री वार्ष्णेय डिग्री कालेज,
अलीगढ़

❖ **श्री राम मिलन सिंह**
प्रधानाचार्य
ओंकारेश्वर सरस्वती विद्या निकेतन
इण्टर कालेज, कानपुर

❖ **श्री रमेश कुमार पाण्डेय**
चेयरमैन
विजन ग्रुप ऑफ इंजीनिरिंग एण्ड
मैनेजमैण्ट इंस्टीट्यूट उत्तर प्रदेश

❖ **डॉ० एम० के० खरे**
पूर्व चिकित्सा अधिकारी
एवं प्रबन्धक सीता पैथोलॉजी,
स्वरूप नगर, कानपुर

❖ **प्रो० (डॉ०) संजय रस्तोगी**
वरिष्ठ चिकित्सक
सर्जन एवं हड्डी रोग विशेषज्ञ, कानपुर

❖ **श्री राजू सेठ**
प्रख्यात छायाकार एवं प्रबन्धक
वाहु कलर लैब सोमदत्त प्लाजा,
कानपुर

विवरणिका

लेख		पृष्ठ सं०
1.	**DYNAMICS OF SINO-INDIAN RELATIONS AND STRATEGIC BALANCE** Dr. S.K.S. Sengar Dr. Govind Singh	**1**
2.	**EDUCATION AND HEALTH FOR INCLUSIVE GROWTH** Dr. Ram Chander	**6**
3.	**INDIA-THAILAND RELATIONSHIP : SIMILARITIES AND POSSIBILITIES** Dr. Krishna Nand Shukla	**11**
4.	**CHALLENGES TO HIGHER EDUCATION** Dr. Sushma Nishad	**25**
5.	**DR. B. R. AMBEDKAR VISION : MYTH AND REALITY** Mr. Pramod Chand	**28**
6.	**US POLICY TOWARDS PAKISTAN IN OBAMA'S PERIOD : CHANGING PERSPECTIVE** Ruchi Singh	**32**
7.	राजनीतिक सहभागिता : समाजशास्त्रीय सैद्धान्तिक विश्लेषण डॉ0 जय शंकर पाण्डेय	37
8.	राष्ट्रभाषा हिन्दी के अनन्य साधक राष्ट्रकवि मैथिलीशरण गुप्त डॉ0 विनय कुमार शर्मा नीलम शर्मा	50
9.	यात्रा–वृतान्त डॉ. विनोद मोहन मिश्र	56

10. पर्यावरण अध्ययन व प्रबन्धन में जी0 आई0 एस0 की महती भूमिका 59
डॉ0 आरती विश्नोई

11. संयुक्त राष्ट्र संघ में स्थाई सदस्यता के लिए भारत की दावेदारी 62
डॉ0 निखिल कुमार सिंह

12. भारत की आंतरिक सुरक्षा पर साइबर आतंकवाद का प्रभाव 71
डॉ. अशोक कुमार तिवारी
डॉ. राम तिवारी

13. अरुणाचल प्रदेश की जनजातियों की सामाजिक पंचायतें 74
डॉ0 रतन लाल
डॉ0 गीता सिंह

14. प्रदेश के विकास में उत्तर–प्रदेश राज्य औद्योगिक विकास निगम लिमिटेड की भूमिका 82
डॉ0 राकेश कुमार

15. उ0 प्र0 सरकार की सर्वजन हिताय नीति का मूल्यांकन 85
डॉ0 अर्चना गुप्ता
डॉ0 प्रतिमा सक्सेना

16. COMPARISON OF PHYSIOLOGICAL FITNESS LEVEL BETWEEN UNDER-GRADUATE AND POST-GRADUATE STUDENTS OF PHYSICAL EDUCATIONUS POLICY TOWARDS PAKISTAN IN OBAMA'S PERIOD : CHANGING PERSPECTIVE 87
Mrs. Ruchi Yadav

17. RIGHT TO INFORMATION AND GOOD GOVERNANCE 93
Pawan Kumar Tiwari

DYNAMICS OF SINO-INDIAN RELATIONS AND STRATEGIC BALANCE

Dr. S.K.S. Sengar
Associate Professor & Head,
Department of Defence Studies,
V.S.S.D. College, Kanpur

Dr. Govind Singh
Associate Professor
Department of Defence Studies
V.S.S.D. College, Kanpur

China is located to the North of India. It's growing nuclear and military power, its phenomenal economic growth and its enhanced industrial capacity makes it a vital strategic concern of India. China believes economics to be the hub of global competition for domination and hegemony. It establishes friendly relations with the countries, which have good economic relations with it. Science and technology, therefore, is considered a key input in that perception. It seeks scientific and technological cooperation with many advanced countries. Israel is an example. Its large trade surplus is used to purchase technologies or for investment in the countries which have high technology available and are willing to share it. This is quid pro quo basis of economic process. For this reason it has established cooperative economic relationship with the countries of Southeast Asia and Asia Pacific region.

India has also determine the areas of mutuality interest in specific activities which will further their political cooperation. India has to target the countries where China is present in a big way in a regional set up. India's look east' policy and it having become a dialogue partner in the ASEAN Regional forum are steps in the right direction.

China has been modernizing and expanding its defence forces for the last decade. It now has modem, mobile and hard hitting armoured forces, strategic air force, wide networks of air defence and a navy, which has extended its reach into the Indian Ocean. China has emerged as a large arms supplier providing specialized weapon systems and other military hardware like missiles, at low prices, with or without strings, depending on the country. It has sold weapons to any country, which could pay. Motive behind China's arms sales to Pakistan, Nepal, Bangladesh, and Burma. Sri Lanka and Afghanistan in South Asia and Iran in West Asia, amongst other things, is to surround India with hostile neighbours. China wishes to deny India the role of major South Asian power and regional cooperation, politically.

India has to have a fresh look at its policy towards its neighbours. That is to deny China capacity to interfere with in South Asia. Since India has once again entered into a cordial relationship with China, it needs to press home the advantage by taking into account the China factor' in its security and strategic assessments. China's military cooperation with Pakistan and Burma is to be accepted as a fact on the ground. India needs to monitor both the countries yet endeavour to establish good relations with all its neighbours, China's friends in East Asia and the West so that mutually beneficial policies emerge.

China and India are poised for settling Sino-Indian border dispute. India has to move faster to get this matter out of the way by pragmatically accepting ground realities and trading space in one sector for the other. Other irritants in bilateral relations also need to be settled. India had one agreement with China for scientific cooperation. It can now take benefit of the new agreements and establish comprehensive bilateral trade relations. China needs high tech banking, software and agro cooperation. India can provide all this at competitive prices. India, in return, can get technologies for silk, polyester and textiles. This can make India participate in the long run, in the Pacific countries developing economies where USA, EU and Japan are major trading partners.

Chinese proliferation and the US reaction to it are of grave security concern to India. The widely advocated thesis that China's reaction to the national missile defence would result in an India-China arms race is a totally untenable one. India's minimum credible deterrent posture will not need revision whether China has 30 or 300 missiles capable of reaching the US.

INDO- CHINA RELATIONS

India and China, the two giants of Asia are two of the oldest and living civilizations of the world. Sindhu and Ganges gave birth to the Indian civilization, which influenced South and South-East Asia. Similarly, Huanghe (Yellow River) and Changjiang (Yangtze River) gave birth to the Chinese civilization, which on its part influenced North-East and Southeast Asia. Being neighbours. India and China had established trade and cultural relations since time immemorial.

If one talks of thousands year old China-Indian cultural interface then there must be a starting point for this. Here an attempt is made by not discussing this evolution by inference but to start from where onward reliable historical records are available. it could be established from these records that China-Indian interface was always a two-way traffic and the two elements of this exchange could be categorized as material exchange and spiritual cultural exchange. This two faceted exchange was carried through the following four routes of communication.

- § The Central Asian Route or the so-called Silk Route.
- § Assam-Burma and Yunnan Route or the famous Southern Silk Route.
- § Tibet Nepal Route, and
- § The Sea Route or the so-called Maritime Silk Route.

CHINA-INDIAN RELATIONS (1954- 62)

India and China are two interesting case-studies, similar in some respects, running parallel at many points, but widely divergent in their aims and methods. Both had suffered from foreign exploitation for over two centuries, had huge populations, mostly poor and living below the poverty line, when they re-emerged into national independence, in 1947 and

1949, respectively. Before that, India had been a British colony, while China, though nominally independent, had been the victim of Japanese, British, French, German, Russian and American colonialism and imperialism. Both are large Asian countries with ancient civilization that never came in direct conflict, except in 1842, during the ill-fated expedition of General Zorawar Singh into Tibet, and in 1962.

There was. however, one main difference between the expansion of Indian and Chinese styles. India did not try to 'Indianise' other countries as China did to 'Sinocize' her neighbours. India did not have territorial ambitions as China had. Chinese maps in school text-books, even as late as 1954, depicted Ladakh, Bhutan, Sikkirn. NEFA (North East Frontier Agency, now Arunachal), Burma, Malaysia, Indochina, Thailand, Korea, the far—Eastern and Asian Republics of the USSR as well as the Mongolian People' Republic as part of the Chinese Empire. Unlike in the British days, and gave up her extraterritorial right. in Tibet, under the 1954 Panch Sheel Agreement with China.

China wanted not only to be the 'Overlord of Asia', hut also 'The Leader of then Communist World' after Stalin's death. The aim was to soften the States around her Southern and South-Western underbelly, to encircle India and establish her own sphere of influence in Asia. She found a willing friend and ally in Pakistan. for this purpose. .

The Chinese faced trouble in Tibet. They tried to suppress it by force. but failed. The Dalai Lama with twenty thousand followers fled to India, in March 1959, across the many mountain routes and passes over which the Chinese has not yet established full control.

They launched a massive invasion, on October 19/20, both in Ladakh and NEFA. The Chinese know we were not expecting or prepared for such a massive invasion. We had relied too much on the Panch Sheel Agreement and Chou En-lai's repeated assurance that all differences could be resolved peaceftully through diplomatic channels. We did not think they would so brazenly violate the Five Principles they had solemnly signed with us. Border differences between neighbouring countries have existed for centuries. Civilised countries settle them peacefully and not by going to war. We had thought the Chinese were too civilized to go to war against us when we posed no threat to them. We failed to understand the new China and its leaders. We neglected our defenses. No agreement, however solemnly entered into, can be enduring, unless it is backed by strength.

The Chinese won a military victory in 1962, but lost the friendship of many generations of Indians. Their invasion galvanized the Indian nation into one united people against all external aggression. The Chinese had not expected this strong reaction. Their lines of communications had lengthened and the world opinion was rising against them. So they made a virtue of necessity by declaring by declaring a 'unilateral ceasefire'. Keeping what they wanted and withdrawing from what they could not keep.

1962 was the lowest point in Sino-. Indian relations. Our friendship had increased suddenly and declined as suddenly. In a matter of eight years. we had turned from close friends to bitter enemies. Neither could really overpower or dominate the other. They would

have to come back to Panch Shed, one day but it would take a long time. Chinese leaders had broken faith with Nehru and stabbed India in the back. The wounds inflicted by China would take time to heal.

Nehru was a sad and shattered man, but he kept his nerve. He converted a national calamity into a national movement, to mobilize the Indian people to protect the motherland and safeguard its sovereignty. Another; leader or country might have broken apart, under such a defeat. The Chinese invasion proved indeed to be a blessing in disguise. India woke up to the need to mend her defences, unite the people and harness her resources. India had lost a battle but not the war. It is at such times that the qualities of a leader and people are tested. India emerged more determined than ever to defend her independence, through her own efforts and such help as she might be able to secure from friendly countries without compromising her policy the lesson of our dealings with China was that as a nonaligned country we had to depend on ourselves and make the most of our own resources. We had to become self- reliant in the economic, defence and political fields, to the maximum extent possible in the minimum time.

The Chinese invasion of 1962 was the first serious threat to our policy of non-alignment. But, it increased our faith in this policy, which helped us to forge better and more enduring friendships that stood us in good stead in later years.

INDIAN CHINA THIRD PHASE PERIOD (1988-1998)

China-Indian relations took a major stride after Rajiv Gandhi's China visit in December 19.88 It was the first of the kind by an Indian Prime Minister in three decades. In a meeting with Rajiv Gandhi on December 21,1988 the then Chairman of China s Central Militar Commission Deng Xiaoping remarked 'Let us forget the unpleasant phase in our past relations and do everything with an eye on the future.

Following Rajivs visit. Chinese Premier Li Peng paid a return visit to India. This time again the Chinese Premier was visiting India after Zhou Enlais 1960 visit. Recalling Rajiv GandhIs China visit Li said, 'I consider his visit as a wise and a bold step. I profoundly cherish his rnemories." During his visit, Li signed five agreements with his Indian counterpart Mr. Narsimha Rao. These being: Consul treaty between India and China. Agreement on restoration of Consuiate General in Bombay and J Shanghai, Memorandum on the restoration of border trade, China-Indian trade protocol for the year 1992 and scientific and technological cooperation in outer space for the peaceful use by the aviation ministries of India and China.

Prime Minister Narsimha Rao's September .6, 1993 China visit is hailed as another\ landmark in the bilateral relations. If Rajiv Gandhi was successful in cutting the ice, then Narsimha'Rao's visit brought a thaw in India-China relations by signing IndoChina accord on Line of Actual Control (LAC) thus setting a stage for a final accord on border problem.

China also ruled out a third party mediation in Kashmir and maintained that it was for

the two Asian neighbors to solve their problems bilaterally through peaceful negotiations.

President Jiang's India visit was deemed highly positive, a major step in strengthening the trust between two countries. The momentum of the exchange of high level visits by two countries enhanced mutual understanding and confidence. In an interview to The Hindu Jiang said, During my visit to India I have reached important common understanding with Indian leaders on the establishment of a constructive and cooperative partnership based on the five Principles of Peaceful Coexistence oriented towards the 21^{st} century so that the China-Indian relations would be further promoted. Now I want to submit my own observation that Indo-China bilateral relations are still bitter and unpredictable specially on the issue of Arunachal Pradesh and Aksai-Chin region. Inspite of exchange of high level deligations between two countries are not promoting healthy, peaceful atmosphere in this subcontinent. But we hope that in future strategic perspectives India will assert to cement the cordial relations to insure the peaceful border issues.

REFERENCES :

1. Calia W. Duggar, Rare Praise from India on Defence.
2. H.Kissinger, Diplomacy, Touchtone, New York, 1994.
3. J.N. Dixit, My South Block years, 1996.
4. Muchkund Dubey, 'The View from India' Times of India, 12 April, 1994.
5. I.K. Gujral, A Foreign Policy for India, 1998.
6. Gen. K. Sunderji, 'India's Nuclear Options' 1992.

STRATEGIC MAP OF NORTHERN REGION OF INDO-CHINA

EDUCATION AND HEALTH FOR INCLUSIVE GROWTH

-Dr. Ram Chander
Assistant Professor of Economics
Govt. Collage Nalwa (Hisar)
Mobile No. 094164-99149
Emai: - ramchander.ram2@gmail.com

We all understand that education only can bring personal, social and economic development of the nation. Educated persons are the real assets of the nation. Development of human resources gives knowledge and confidence, for inclusive growth and to built a progressive, vibrant and better nation. Human development can not be possible without better Education and Health.it is a long time systematic training and professional instruction designed to impact knowledge and develops one's skill. The need of the hour is not only to make people educate but also to make them healthy and highly educated because a thorough and quality education can provide the necessary resources to develop the nation. The social infrastructure in India includes the education system in India, healthcare, the management of education And health services in India that form the basic social infrastructure definition. The India government looks after the social development in India by careful infrastructure planning and handling the social issues in close co-ordination.

Education provides proper attitudes, values capabilities of knowledge and skill to persons. Social development, in its form, depends on economic upliftment to furtherance of material advancement of people; promotes democratic, intellectual, cultural and aesthetic development for enrichment of quality of life of a human being.

Conventionally economic development laid emphasis exclusively on the expansion of one choice i.e. income only Human Development Index (HDI) includes three main indicators, Life Expectancy, Adult literacy Rate and Gross Enrolment Ratio. UNDP, an agency of United Nations introduced the concept of Human Development Index in 1990, Human development is a process of widening people's choices as well as raising the level of well being achieved.HDI measures the human development life expectancy means longevity of life, it will automatically raise the other two indicators. But longevity of life can be raised if primary healthcare is taken up seriously. The government's latest survey of living standards reports that primary health is a dismal state in India. If primary health and education care is not taken seriously, no development can remain sustainable.

India's performance on United Human Development Index (HDI) based on parameters like life expectancy, school enrollment, access to health, literacy, gender parity and sanitation levels, is poor. Under United Nations Development Programme (UNDP), countries have been ranked on the basis of (HDI). It is very distressing to note that India has

been ranked at 127th on the basis of HDI in 2003 while USA stands at 10th, Canada stands at 5th and China stands at 85th rank.

Failure to secure a balanced diet manifests in India. The fact has an important bearing on the health of the people is that in India cereals predominate, but in contrast the diet in the advanced countries is rich in content because it in includes fruits, fish, meat, butter and sugar. According to World Development Indicators, 46 percent of the child population in India suffers from malnutrition. Nearly 60% of the mothers are malnourished. Nutrition influences economic development via raising the level of productivity, efficiency and intelligence of the community. In India about 56% of the urban population and about 49% of the rural population suffer from inadequate nutrition as they do not get a calorie intake of 2,400 per day considered as a reasonable level of nutrition.

Maternal Mortality Ratios (MMR) per lakh of live births is an important indicator of the reach of effective clinical health services to the poor and of country's progress. In terms of numbers, MDGs targets translate into MMR 109 by 2015. In our country MMR dropped from 400 in 1997-98 to about 30 in 2001-03, which amounts to decline by 16 points per year. At this rate of decline, MMR would be 195 by 2012 even by libral estimate. Goal of achieving MMR of 109 by 2015 therefore calls for quicker response from all sections of the society through education and mobilization. Other health related issues are as Infant Mortality Rates per thousand of live births (IMR) have dropped from 80 in 1990 to 60 in 2003. The MDG calls for drop of under-Five mortality rates to 42 in 2015. Though India has low prevalence of HIV among women compared to other developing countries, yet prevalence rates increased from 0.74 per thousand in 2002 to 0.86 in 2003. This trend needs to be reversed. Prevalence and death rates associated with malaria are coming down. Death rate associated with TB has also dropped very fast. These trends need to be maintained.

Education plays an elemental role in our lives. Primary and higher education being an integral part of development process of human and natural resources, has become a global issue. Education only can bring personal, social and national development. Educated citizens are the real assets of any society. India is one of the fastest growing economy of the world in the 21st century. Its dominance in the service sector particularly in the technology has been acknowledged all over the world. The education sector has had an important role to play in achieving this pre-eminent position and overall development of the country.

In India about 65.5% population is literate out of this 3.6% percent are literats without educational level, of the rest 26% has only primary school education,16.1% has middle school education .Education of matriculation level and above accounted for only 28.3% of the population. It is this sector and distribution within this sector that is crucial for development.

The Govt. pledges to raise public expenditure in education to at least 6% of GDP with at least half of this amount being spent on primary and secondary schools. This will be done in a phased manner. The Govt. will introduce access on all central taxes to finance the

commitment to universalize access to quality basic education. The govt. will ensure that no body is denied. Professional education because he or she is poor. As against the goal of 6% of GDP, the total expenditure on education in India is currently 3.99% of GDP.

The access to higher education is measured in term of gross enrolment ratio, which is a ratio of persons enrolled in higher education institutions to total population of the persons in age group of 18 to 23 years. In higher education the gross enrolment ratio is 11% in India. It recognized that the 115 enrollment rate is too low compared to 23% of world average or 36.57 for developed countries. Development experience of the developed countries indicates that sustained economic growth requires a minimum of 20% to 25% enrolment in higher education.

Until 20 yrs ago, general presumption was that economic development and the associated improvement in living standards led to lower IMRs and higher LEBs. Over the past two decades research has accumulated indicating that health conditions could be improved substantially even at low income level through appropriate policy interventions and that causation may sometimes run the other way as well better health conditions of population leading to improved economic performance.

Thus china's IMR in 1980 was only two-fifths the level of India's at a time when many believe their average income user quite similar to China had already reaped the fruits of sustained attention to primary healthcare and intergarated rural development with substantial focus on improved water supply and sanitation. In contrast, India government policy had accorded much less resources and attention to health-care, including public health.

Health and nutrition go together, especially for children. Child nutrition has certainly improved in India since 1980, the India Health Report-2010 (IHR-10) emphasizes that the rate of improvement is much less than is Latin America and Assian Countries such as China Philippines and Sri Lanka. The IHR-10 describes the well known diversity in the social-economic record across India's States. In 2005-07 the IMR in Madhya Pradesh, Orissa, Rajasthan and Uttar Pradesh was around 65-70 per 1000 live births, as compared to 13 in Kerala, 34 in Maharashtra and 35 in Tamil Nadu. Indeed, IMRs in backward India States are quite comparable to many sub-Saharan African Countries, not what one might expected from an aspiring economic super power.

The overwhelming majority of Indians have inadequate access to quality healthcare. Access is particularly poor for rural households, scheduled tribes and women. Private healthcare providers predominate in both institutions and institutional services.Unqualified practitioners are in majority among service providers.

Distressingly, given the above, the bulk of ailments among the poorest qualities are treated at private facilities.About 7-8 percent of household drop below the poverty because of medical expenses. There are critical gaps in healthcare infrastructure, especially in terms of health centres and trained staff.

This paper reviews the states on major inputs for good health of population: adequate supply of trained and motivated healthcare providers, an adequate and equitably dispersed network of healthcare centers and hospitals, a good water supply and sanitation system, decent nutrition and widely prevalent hygienic practices. India is found grossly wanting in all these dimensions. The paper concludes "Whatever the input, however, all suffer from one key constraint: the lack of a public health focus. It notes that much of what needs to be done to promote better planning and execution of public health policies lies outside the domain of the Ministry of Health and Family Welfare (MHEW). India requires a driver for public health for which currently the MHFW is not empowered enough to be". It is instructive to know that MHFW runs 42 centrally sponsored programmes, ranging form diseases such as AIDS, TB, Leprosy and cancer, to various initiatives to support Indian systems of medicine and homeopathy.

India's health sector in historical perspective is that since the Bhore Committee of 1946 there have been 21 Committees and Commissions looking into leading facts of the health sector. There some institutional impediments in asking reform forward , including weak ministers of MHFW in the last 20 years and a lack of priority to health in other policy organs like the Planning Commission, the Prime Minister's office and the Ministry of Finance.

Today Indian education is suffering from many problems. There are many schools colleges and institutes where science , medical, business, computer, engineering, media etc, and a lot of carrier builder offered in India although there is a big education problem is that many of students could not get a higher education in case of money problem. There is a huge student population in India so many students could not appear in the college/ university after passing the entrance exam because there is seat limit in Higher Education College and a high fee structure. And more and more students in India belong to middle class family. In India more than 500 thousands para teacher are available in the number of states. This is done by government to improve the quality of education. The supply of free study material , free vehicle, free uniform and many things for a general student but it is found that the teacher is absent , only a few teacher for a number of student and teacher are not well educated.

In India there are more than 100 crore people but only one third of them are able to read. This is a country where maximum people are in an economical and social problem, due this reason the Indian Education System is continuing under fall. The education system of rural area is too poor. Both the children and the teacher's attribute also effectiveness, many student of rural area receive a poor education and more of them leave the school before the 5th standard. The girl of the rural area is not getting education due to parent's plan. The parents of rural thoughts about the girl that she is not for education, she is for only housewife. There is 60% of female in rural area of India is not educated while in other countries not this problem. Decent quality of education is not found in the rich and upper middle family because the parents sent their children in private school where only passing the exams is

taken as priority is not a well learning criterion.

After graduation many of students are unable to study regular courses due to not availability of more colleges /university or unable to fulfill the fee structure. And even a graduation degree is not employable in India. Most of students do not get education in private schools because all of the private schools are made a compulsory free structure till 12th standard and the children who born in poor family is decided to admit in Govt. school where he/she does not get a true education. Rather Indian doctor, engineer, manager, are around the world and remember able for their effort and victory.

Development that meets the needs of the present without compromising the ability of future generations to meet their own needs. The essence of this form of development is a stable relationship between human activities and the natural world, which does not diminish the protects for future generations to enjoy a quality of life at least as good as our own. The concept of sustainable development is presented as a solution preservation of the environment, protecting it for present and future generations.

To conclude, one of the important factors that is helping us in our sustenance, is our self reliance on quality man power. Changing our huge human power into an asset is one of the greatest developmental challenges we have before us today. We can give a great momentum to our economic development by better social infrastructure. The problem of brining sudden quantitative changes in poorly managed infrastructure in the existing scenario of a developing country like India worries us facilities; no – availability of suitable infrastructure and understaffed institutions of learning ? Various reasons attributed to high Maternal Mortality Ratio are early marriage and child birth; lake of adequate health care facilities; inadequate nutrition; absence of skilled persons and lack of emergency referral transport. Primary and higher eaduction being and interal part of development process of human and natural resources; has become global issue. Social infrastructure only can bring personal; social and economic development.Eaducated and healthy citizens are the real assets of any society. We can give a great momentum to our economic development by better social infrastructure.

Reference

1. Indian Health Report-2010. w.w.w.indaihealth.com
2. Investing in development:- A practical plan to Achieve Development Goals.w.w.w.millenniumproject.org
3. Ruddar Dutt, K.P.M Sundharam.2007, Indian Economy, publisher S. Chand & Company Ltd. near Delhi. .
4. Rao, V.K.-1996,Education and Human Resource Development, Allied Publisher,Bombay
5. w.w.w.indiaeducation.com

INDIA-THAILAND RELATIONSHIP : SIMILARITIES AND POSSIBILITIES

-Dr. Krishna Nand Shukla
Associate Professor
Dept. of Defence Studies
J. L. N. S. P.G. College, Maharajganj (U. P.)

India and Thailand, located in each other's extended neighbourhood, share a maritime boundary in the Andaman Sea. Both countries share unique civilizational links going back several millennia. The shared link of Buddhism is reflected in regular pilgrimages to places of Buddhist interest in India by a large number of Thai people. Hindu elements can be found among those reflected in Thai architecture, arts, sculpture, dance, drama and literature. The Thai language incorporates Pali and Sanskrit influences. A large Indian Diaspora living and working in Thailand is another important bond. Over the past two decades India's 'Look East' policy has been complemented by Thailand's 'Look West' policy in bringing the two countries closer. India and Thailand celebrated 60 years of their diplomatic relations in 2007. In recent years, political contacts have intensified as reflected in a series of high level visits by leaders of the two countries. Trade and economic linkages and tourist traffic continue to grow steadily. Both countries are important regional partners linking South and Southeast Asia. They cooperate closely in the ASEAN, East Asia Summit (EAS) and BIMSTEC groupings as also Mekong Ganga Cooperation (MGC) and Asia Cooperation Dialogue (ACD). The implementation of the India-AESAN Agreement on Trade in Goods from January 2010 is an important latest milestone of this partnership. India and Thailand have enjoyed a close and mutually enriching relationship for over a millenium and the friendship seems to be growing by leaps and bounds even to this present day.

This close and cordial relationship between India and Thailand is rooted in centuries of continuous interaction. The importance of the influence of Indian culture on the development of Thai culture cannot be over emphasized. Thailand's relationship with India spans over a thousand years and understandably this resulted in an adaptation of Indian culture to suit the Thai environment. Evidence of strong religious, cultural and linguistic links abound. The single most significant cultural contribution of India, for which Thailand is greatly indebted to India, is 'Buddhism'. Propagated in Thailand in the 3rd Century B.C. by Buddhist monks sent by King Asoka, it was adopted as the state religion of Thailand and has ruled the hearts and minds of Thais ever since. Presently 58,000,000 Thais, an overwhelming 94% of the total Thai populace adheres to Buddhism Historically, the cultural and economic interaction between the two countries can be traced to roughly around the 6th Century B.C. However, direct contact can be said to have begun only in the 3rd Century B.C. when King Asoka sent Buddhist monks to propagate Buddhism in the Indo-Chinese peninsula. Besides Buddhism, Thailand has also adopted other typically Indian religious and cultural traditions.

The ceremonies and rites especially as regards the 'Monarchy' evidence a strong Hindu, more of which I will deal with a little later.

Thailand has drawn great inspiration from India. theatre and arts, language and ceremonies or even food habits. This has bonded the two countries in a unique and intimate manner. Way back in 1871 H.M. King Chulalongkorn visited India. Then again during the reign of H.M. King Vajiravudh (Rama VI) a senior court official visited India to collect relics of the Lord Buddha that had been enshrined in the Wat Sa-ket Pagoda. This friendship received a strong boost when India and Thailand established diplomatic relations on 30th July 1947. After the Cold war, favorable circumstances led to a significant improvement in the atmosphere of bilateral relations. This was reinforced by increasing economic and commercial links, exchange of high-level visits from both sides, beginning with the visit by India's Prime Minister, Rajiv Gandhi in 1986 and the Thai Prime Minister Gen. Chatichai Choonbavan in 1989. H.R.H. Crown Prince Maha Vajiralongkorn visited India in April 1992 for 15 days. Former Prime Minister Mr. P.V. Narasimha Rao's visit to Thailand in April 1993 set the stage for a substantive consolidation of bilateral relations. Bilateral cooperation grew as such high level visits continued. H.R.H. Princess Chulabhorn, the youngest daughter of H.M. the King of Thailand, visited India from 19th November to 1st December 1996 in connection with the United Nations Environment Program (UNEP) Award Ceremony. H.R.H. Princess Maha Chakri Sirindhorn, second daughter of H.M. the King of Thailand, visited Andaman and Nicobar Island from 21st 26th December 1996. The present Thai Prime Minister Dr. Thaksin Shinawatra had visited India in November 2001 and in the beginning of this year.

In the post cold war and post September 11 context international relations are being redefined and a new politico-security-economic international architecture is evolving and emerging. Even in a uni-polar world, new centres of power, partnerships and alliances are being forged and old ones reevaluated and reshaped. In a manner of speaking the world is coming to grips with and is trying to cope with new challenges and opportunities – strategic, security, political, social, ecological, economic and commercial. At a time when national, sub-regional, regional and international equations are rapidly changing and new perspectives and imperatives are emerging, countries with age-old multi-faceted and time tested relationships like India and Thailand need to reflect on their bilateral, sub-regional and regional interface and take steps to contemporise their ancient relationship and give it a new relevance, meaning, definition and even identity of purpose. Until about the late 80s it was customary to look at India-Thailand relations largely in a shared civilisational, cultural and historical prism. Unfortunately, modern day nation states and regional entities do not always base their international relations in such a narrow paradigm. A relationship devoid of fundamental mutual convergence of interests and deep and sustainable manifest content and mutuality of interests is unlikely to prosper in the contemporary context. Even though India-Thailand relations go back into antiquity and have been nurtured by unique bonds, our modern diplomatic relations are comparatively recent, established after India's

independence.

The imperatives of cold-war geo-politics inevitably drew India and Thailand apart, both looking at each other from the cold-war prism. India was seen as being too closely tied to the Soviet apron strings and decisively on the other side of the cold-war divide; non-alignment was seen to be synonymous with anti-Americanism; there was very little bilateral content to this ancient relationship to mitigate the pulls and pressures of the cold-war divide. India, on the other hand, viewed Thailand as an integral and indispensable part of the US led strategic alliance, inimical to its own interests in a vital neighbouring region. Both countries continued to drift apart, maintaining only minimal correct relations with virtually no warmth, devoid of any significant political, strategic, cultural or commercial mutuality of interests. The 1980s saw a further distancing and diminishing of bilateral relations; India's policy of Kampuchea – a close neighbour of Thailand's - and Indo-China were seen as unacceptable and inimical. The relationship dipped to a new low of neglect. The perception that a poverty-ridden India was too embroiled in sub-continental problems did not help matters. China was beginning to emerge as a major factor in South-East Asia and comparisons between India and China were inevitable. It was only after Prime Minister P.V. Narasimha Rao launched his historic and path breaking "Look East Policy" after the end of the cold-war and visited Thailand in April 1993 in pursuance of this policy that relations began to gradually improve both bilaterally with Thailand the regionally with ASEAN. It is significant that Mr. Narasimha Rao chose Thailand for his first visit outside the sub-continent demonstrating the importance he and India attached to relations with Thailand, which was seen as a gateway to South East Asia. After 1993, there was no looking back and India's all-round relations with Thailand and ASEAN began to prosper and grow multi-dimensionally, particularly in areas like trade and investments, tourism, HRD, science & technology and in evolving a new partnership. The time had come for the two great neighbours, India and Thailand, to catapult their somewhat low content and low intensity relationship into a meaningful, mutually beneficial and a sustaining partnership based on our respective national, sub-regional, regional and international imperatives and the new post cold-war convergences that make India and Thailand indispensable partners. There were new opportunities and the climate was much more propitious. What then are these new opportunities and convergences, in the contemporary context, and what can the two partners do to evolve a mutually supportive and sustainable relationship?

Thailand has traditionally had a very close relationship with China for decades; but no more. This is not because any major differences have surfaced between the two countries, but because China is today as friendly to other ASEAN nations as it is to Thailand. This has bugged Bangkok. This was evident in the February 2011 Thailand-Cambodia border clashes when China took a neutral stand. A decade earlier, China would have had openly supported Thailand. The Thai government must not have missed the message: one who is friend to all is friend to none.

It is against the backdrop of this Thai unease with China that the State visit of Thai

Prime Minister Abhisit Vejjajiva to India (April 4-5, 2011) should be seen. Thailand is increasingly getting suspicious of China. India has been wary of China for decades and China too looks at India as a potential rival at the regional and global stage. Therefore, when Vejjajiva visited India, both sides had a strategic agenda at the back their minds. The outcome of Vejjajiva's talks with Indian Prime Minister Manmohan Singh suggests that the two leaders are going to take the India-Thailand bilateral relationship to a higher level, imbued with strategic overtones. Here is how.

India and Thailand held a summit in New Delhi on April 5 and agreed to take their already vibrant relationship to the next level by concluding at the earliest such bilateral documents as Extradition Treaty, Mutual Legal Assistance Treaty in Civil and Commercial Matters and Agreement on Transfer of Sentenced Persons. Significantly, the Trilateral Highway connecting India to Thailand via Myanmar came up for discussion during this summit and the two leaders reiterated their commitment to realization of the proposed highway to enhance regional transport networks. The highway, while promoting trade and people to people contacts, will also help revive the shared cultural contacts and the ancient routes of knowledge and pilgrimage, the two prime ministers underlined. The importance of Vejjajiva's two-day trip to India can be gauged by the fact that he came here on a state visit; in international diplomacy, a “state visit” is the highest type of a visit by a foreign dignitary, much higher than a “working visit” or an “official visit”. Another pointer to the seriousness Vejjajiva attached to his India visit is that he was accompanied by some key officials in his government, including the Foreign Minister, the Industry Minister, the Deputy Minister of Commerce, and the President of the Thai Trade Representative Office. Appropriately, the Thai Prime Minister also met President Pratibha Devisingh Patil, Vice President Hamid Ansari and External Affairs Minister S.M. Krishna, and also attended a business luncheon hosted by three Indian chambers of commerce. The two Prime Ministers agreed to energize bilateral institutional mechanisms, enhance cooperation in security matters and to upgrade the bilateral dialogue on defense matters. The two countries already have an on-going programme of defense cooperation, characterized by a number of exchanges between the armed forces of both countries, joint exercises and participation in each others' defense training programmes.

However, in today's environment this engagement is inadequate and far too short of the potential. In view of this, the two leaders decided to establish a regular High-Level Dialogue on Defense Cooperation between the Ministries of Defense of both countries in the near future, details of which would be finalized in near future. Once this mechanism is formally set up, it would regularly review all the elements of bilateral defense cooperation, including in the area of defense industry and technology. The Dialogue would also include discussions on a bilateral MoU on Defense Cooperation. Another important area of India-Thailand bilateral cooperation that came up for some focused discussion at the Singh-Vejjajiva summit pertained to terrorism. They decided to substantively enhance counter-terrorism bilateral cooperation and take effective steps in restricting transnational movement

and unauthorized stay of known terrorists in each other's countries. And yes, the two leaders also mouthed the routine condemnation of terrorism "in all its forms and manifestations" and stressed that there could be no justification whatsoever for any act of terrorism.

The strategic location of Thailand in the heart of South East Asia makes it impossible for today's globe-trotting terrorists' leaders to skip the country. That is why an extradition treaty and real-time intelligence sharing would go a long way in combating the menace of terrorism. In view of this, it is a welcome decision by Singh and Vejjajiva to commit their countries to improve sharing of intelligence, the development of more effective counter-terrorism policies, enhance liaison between law enforcement agencies, provide assistance in the areas of border and immigration control to stem the flow of terrorist related material, money and people and specific measures against transnational crimes, through the already existing mechanisms between Thailand and India. To ensure that all this is not reduced to a mere talking shop, the two leaders decided to bring their counter-terrorism cooperation under the rubric of an institutionalized mechanism. To achieve this objective, they agreed that the next meeting of the Joint Working Group on Security Cooperation, the sixth one in the series, will be held within the next six months.

India and Thailand have also agreed to intensify their cooperation in the crucial area of combating sea piracy. The two sides discussed measures to enhance their joint patrolling of the sea lanes and agreed to increase the duration and frequency of such patrols to deal with pirates who are increasingly getting more aggressive and ambitious in their high-profit, low-risk business. The two sides will also explore the possibilities of synergizing their respective Coast Guard operations and sharing their experiences for larger benefit. In this context, the Prime Minister of Thailand expressed his appreciation at a string of recent actions by the Indian Navy and Indian Coast Guard which led to the successful release of several Thai nationals who had been the victims of piracy in the Indian Ocean. In keeping with the contemporary trends in international diplomacy wherein no foreign dignitary's visit to another country is complete without an in-depth discussion on boosting mutual trade, India and Thailand too had their due share of the economic diplomacy during Vejjajiva's visit. The India-Thailand bilateral trade has grown six times in ten years to $ 6.7 billion and the two sides resolved on April 5, 2011 to double it by 2014. The target can be easily achieved as the two sides are at an advanced stage of negotiations for a comprehensive Free Trade Agreement and hope to clinch it later this year. India already has an FTA with ASEAN which has been operational since January 1, 2010.

The Thai Prime Minister said "Thailand's Look-West Policy sets the stage in consolidating our substantive bilateral engagement" and expressed the hope that the trade between the two countries will hit $10 billion mark by the end of next year. Vejjajiva also had a substantive business meeting with Indian Commerce and Industry Minister Anand Sharma and Sharma urged him to come up with large investments in two sunrise sectors in India: infrastructure and agro-processing. Sharma told the Thai Prime Minister that these two sectors are likely to see investments of over one trillion dollars and $200 billion respectively

in next five years. He also pointed out that India has allowed 100% foreign direct investment in agro-processing sector and Thai investors with their strengths in agro-processing would be invaluable partners. Sharma stressed the value of Thai partnership in developing the entire value chain of agriculture including investments in agro-processing to curb post-harvest wastage which is unacceptably high (30-35% of the total produce). He called for Thai companies to invest in developing cold-chains, warehouses and food processing facilities which will be a contribution not just to the Indian economy but also to global food security.

Culture of Thailand :- The culture of Thailand incorporates cultural beliefs and characteristics indigenous to the area known as modern day Thailand coupled with much influence from ancient India, China, Cambodia, along with the neighbouring pre-historic cultures of Southeast Asia. It is influenced primarily by Animism, Hinduism, Buddhism, as well as by later migrations from China, and southern India.

1. Arts :- Thai visual art was traditionally primarily Buddhist. Thai Buddha images from different periods have a number of distinctive styles. Thai temple art and architecture evolved from a number of sources, one of them being Khmer architecture. Contemporary Thai art often combines traditional Thai elements with modern techniques. Literature in Thailand is heavily influenced by Indian Hindu culture. The most notable works of Thai literature are a version of the Ramayana, a Hindu religious epic, called the Ramakien, written in part by Kings Rama I and Rama II, and the poetry of Sunthorn Phu. There is no tradition of spoken drama in Thailand, the role instead being filled by Thai dance. This is divided into three categories- *khon*, *lakhon* and *likay*- *khon* being the most elaborate and *likay* the most popular. Nang drama, a form of shadow play, is found in the south. The music of Thailand includes classical and folk music traditions as well as *string* or pop music.

2. Religion :- Thailand is nearly 95% Theravada Buddhist (which includes the Thai Forest Tradition and the Dhammayuttika Nikaya and Santi Asoke sects,) with minorities of Muslims (4.6%), Christians (0.7%), Mahayana Buddhists, and other religions.[1] Thai Theravada Buddhism is supported and overseen by the government, with monks receiving a number of government benefits, such as free use of the public transportation infrastructure.

Buddhism in Thailand is strongly influenced by traditional beliefs regarding ancestral and natural spirits, which have been incorporated into Buddhist cosmology. Most Thai people own spirit houses, miniature wooden houses in which they believe household spirits live. They present offerings of food and drink to these spirits to keep them happy. If these spirits aren't happy, it is believed that they will inhabit the larger household of the Thai, and cause chaos. These spirit houses can be found in public places and in the streets of Thailand, where the public make offerings. Prior to the rise of Theravada Buddhism, both Indian Brahmanic religion and Mahayana Buddhism were present in Thailand. Influences from both these traditions can still be seen in the present day. Brahmanist shrines play an important role in Thai folk religion, and the Mahayana Buddhist influence is reflected in the presence of figures like Lokesvara, a form of the bodhisattva Avalokitesvara sometimes

incorporated into Thailand's iconography.

3. Cuisine :- Thai cuisine is famous for the blending of four fundamental tastes:

- sweet (sugar, fruits)
- spicy hot (chilies)
- sour (lime juice, tamarind)
- salty (fish sauce, soy sauce)

Most of the dishes in Thai cuisine try to combine most, if not all, of these tastes. It is accomplished by using a host of herbs, spices and fruit, including: chili, galangal, garlic, lime leaves, basil, sweet basil, lime, lemongrass, coriander, pepper, turmeric, and shallot.

4. Sports :- The most popular team sport in Thailand is football (also known as association football or soccer). However, the professional leagues Thai League and Pro League in Thailand are in their infancy. The English and Premiership have large followings. Muay Thai (Thai boxing) is probably the most popular spectator sport in Thailand. The other main indigenous sport is takraw, which is similar to volleyball, but played with their feet and a light rattan ball. There are several versions of the game with differing rules. There is a Swan Boat circuit where the villages field teams compete. The international invitational race is usually in November.

Egg rolling once enjoyed national-pastime status, but famine and egg shortages around the middle of the last century caused it to retreat to rural villages, where it is still practiced with traditional vigour.

5. Customs :- One of the most distinctive Thai customs is the *wai*, which is similar to the Indian namaste gesture. Showing greeting, farewell, or acknowledgement, it comes in several forms reflecting the relative status of those involved, but generally it involves a prayer-like gesture with the hands and a bow of the head. Physical demonstrations of affection in public are common between friends, but less so between lovers. It is thus common to see friends walking together holding hands, but couples rarely do so except in Westernized areas.

A notable social norm holds that touching someone on the head may be considered rude. It is also considered rude to place one's feet at a level above someone else's head, especially if that person is of higher social standing. This is because the Thai people consider the foot to be the dirtiest and lowliest part of the body, and the head the most respected and highest part of the body. This also influences how Thais sit when on the ground—their feet always pointing away from others, tucked to the side or behind them. Pointing at or touching something with the feet is also considered rude.

In everyday life in Thailand, there is a strong emphasis on the concept of sanuk; the idea that life should be fun. Because of this, Thai can be quite playful at work and during day-to-day activities. Displaying positive emotions in social interactions is also important in Thai culture, so much so that Thailand is often referred to as the Land of Smiles. Conflict and displays of anger are eschewed in Thai culture and, as is many Asian cultures, the notion of face is extremely important. For these reasons, visitors should take care not to create conflict,

to display anger or to cause a Thai person to lose face. Disagreements or disputes should be handled with a smile and no attempt should be made to assign blame to another. Often, the Thai will deal with disagreements, minor mistakes or misfortunes by using the phrase "mai pen rai", translated as "it doesn't matter". The ubiquitous use of this phrase in Thailand reflects its utility as a means for minimizing conflict, disagreements or complaints as one can merely reply "mai pen rai" to indicate that the incident is not important and therefore there is no conflict or loss of face involved.

Another Thai custom is *bun khun,* the indebtedness towards parents, as well as towards guardians, teachers and caretakers. It describes the feelings and practices involved in certain relationships organized around generalized reciprocity, the slow-acting accounting of an exchange calculated according to locally interpreted scales and measures. It is also considered extremely rude to step on a Thai coin, because the king's head appears on the coin. When sitting in a temple, one is expected to point one's feet away from images of the Buddha. Shrines inside Thai residences are arranged so as to ensure that the feet are not pointed towards the religious icons—such as placing the shrine on the same wall as the head of a bed, if a house is too small to remove the shrine from the bedroom entirely. It is also customary to remove one's footwear before entering a home or the sacred areas within a temple, and not to step on the threshold.

There are a number of Thai customs relating to the special status of monks in Thai society. Due to religious discipline, Thai monks are forbidden physical contact with women. Women are therefore expected to make way for passing monks to ensure that accidental contact does not occur. A variety of methods are employed to ensure that no incidental contact (or the appearance of such contact) between women and monks occurs. Women making offerings to monks place their donation at the feet of the monk, or on a cloth laid on the ground or a table. Powders or unguents intended to carry a blessing are applied to Thai women by monks using the end of a candle or stick. Lay people are expected to sit or stand with their heads at a lower level than that of a monk. Within a temple, monks may sit on a raised platform during ceremonies to make this easier to achieve.

6. Marriage :- Thai marriage ceremonies between Buddhists are generally divided into two parts: a Buddhist component, which includes the recitation of prayers and the offering of food and other gifts to monks and images of the Buddha, and a non-Buddhist component rooted in folk traditions, which centers on the couple's family. In former times, it was unknown for Buddhist monks to be present at any stage of the marriage ceremony itself. As monks were required to attend to the dead during funerals, their presence at a marriage (which was associated with fertility, and intended to produce children) was considered a bad omen. A couple would seek a blessing from their local temple before or after being married, and might consult a monk for astrological advice in setting an auspicious date for the wedding. The non-Buddhist portions of the wedding would take place away from the temple, and would often take place on a separate day. In modern times, these prohibitions have been significantly relaxed. It is not uncommon for a visit to a temple to be made on the same day as

the non-Buddhist portions of a wedding, or even for the wedding to take place within the temple. While a division is still commonly observed between the "religious" and "secular" portions of a wedding service, it may be as simple as the monks present for the Buddhist ceremony departing to take lunch once their role is complete. During the Buddhist component of the wedding service, the couple first bow before the image of the Buddha. They then recite certain basic Buddhist prayers or chants (typically including taking the Three Refuges and the Five Precepts), and light incense and candles before the image. The parents of the couple may then be called upon to 'connect' them, by placing upon the heads of the bride and groom twin loops of string or thread that link the couple together. The couple may then make offerings of food, flowers, and medicine to the monks present. Cash gifts (usually placed in an envelope) may also be presented to the temple at this time.

The monks may then unwind a small length of thread that is held between the hands of the assembled monks. They begin a series of recitations of Pali scriptures intended to bring merit and blessings to the new couple. The string terminates with the lead monk, who may connect it to a container of water that will be 'sanctified' for the ceremony. Merit is said to travel through the string and be conveyed to the water; a similar arrangement is used to transfer merit to the dead at a funeral, further evidence of the weakening of the taboo on mixing funerary imagery and trappings with marriage ceremonies. Blessed water may be mixed with wax drippings from a candle lit before the Buddha image and other unguents and herbs to create a 'paste' that is then applied to the foreheads of the bride and groom to create a small 'dot', similar to the marking sometimes made with red ochre on Hindu devotees. The bride's mark is created with the butt end of the candle rather than the monk's thumb, in keeping with the Vinaya prohibition against touching women. The highest-ranking monk present may elect to say a few words to the couple, offering advice or encouragement. The couple may then make offerings of food to the monks, at which point the Buddhist portion of the ceremony is concluded. The Thai dowry system is known as the 'Sin Sodt'. Traditionally, the groom will be expected to pay a sum of money to the family, to compensate them and to demonstrate that the groom is financially capable of taking care of their daughter. Sometimes, this sum is purely symbolic, and will be returned to the bride and groom after the wedding has taken place.

The religious component of marriage ceremonies between Thai Muslims are markedly different from that described above. The Imam of the local mosque, the groom, the father of the bride, men in the immediate family and important men in the community sit in a circle during the ceremony, conducted by the Imam. All the women, including the bride, sit in a separate room and do not have any direct participation in the ceremony. The secular component of the ceremony, however, is often nearly identical to the secular part of Thai Buddhist wedding ceremonies. The only notable difference here is the type of meat served to guests (goat and/or beef instead of pork). Thai Muslims frequently, though not always, also follow the conventions of the Thai dowry system.

7. Funerals :- Traditionally funerals last for a week. Crying is discouraged during

the funeral, so as not to worry the spirit of the deceased. Many activities surrounding the funeral are intended to make merit for the deceased. Copies of Buddhist scriptures may be printed and distributed in the name of the deceased, and gifts are usually given to a local temple. Monks are invited to chant prayers that are intended to provide merit for the deceased, as well as to provide protection against the possibility of the dead relative returning as a malicious spirit. A picture of the deceased from his/her best days will often be displayed next to the coffin. Often, a thread is connected to the corpse or coffin which is held by the chanting monks during their recitation; this thread is intended to transfer the merit of the monks' recitation to the deceased. The corpse is cremated, and the urn with the ash is usually kept in a chedi in the local temple. The Chinese minority however bury the deceased.

8. Holidays :- Important holidays in Thai culture include Thai New Year, or Songkran, which is officially observed from April 13 to 15 each year. Falling at the end of the dry season and during the hot season in Thailand, the celebrations notoriously feature boisterous water throwing. The water throwing stemmed from washing Buddha images and lightly sprinkling scented water on the hands of elderly people. Small amounts of scented talcum powder were also used in the annual cleansing rite. But in recent decades the use of water has intensified with the use of hoses, barrels, squirt guns, high-pressure tubes and copious amounts of powder. Another holiday is Loi Krathong, which is held on the 12 full moon of the Thai lunar calendar. While not a government-observed holiday, it is nonetheless an auspicious day in Thai culture, in which Thai people "loi", meaning "to float" a "krathong", a small raft traditionally made from a section of banana tree, decorated with elaborately-folded banana leaves, flowers, candles, incense sticks etc. The act of floating away the candle raft is symbolic of letting go of all one's grudges, anger and defilements, so that one can start life afresh on a better foot.

9. Nicknames :- Thais universally have one, or occasionally more, short nicknames (Thai: ชื่อเล่น *play-name*) that they use with friends and family. Often first given by friends or an older family member, these nicknames are typically one syllable (or worn down from two syllables to one). Though they may be simply shortened versions of a full name, they quite frequently have no relation to the Thai's full name and are often humorous and/or nonsense words. Traditionally call-names would be after things with low value, eg 'dirt', which was to convince bad spirits that the child was not worth their attention. Some common nicknames (the non-nonsense ones, anyway) would translate into English as fatty, pig, little one, frog, banana, green, or girl/boy. Though rare, sometimes Thai children are given nicknames after the order they were born into the family (i.e. one, two, three, etc.). Nicknames are useful because official Thai names are often long, particularly among Thais of Chinese descent, whose lengthy names stem from an attempt to translate Chinese names into Thai equivalents, or among Thai with similarly lengthy Sanskrit-derived names.

FEATURES OF DEVELOPING RELATIONSHIP :-

1. The post cold-war strategic and security landscape has dramatically altered the

perspectives of countries and regions, including India and Thailand.

2. Both India and Thailand have a deep and enduring interest in containing the effects of the rapid 'nuclearisation' and the easy availability, transfer and possible use of weapons of mass destruction, (WMD) particularly in our extended neighbourhood.
3. India's "Look East Policy", initially, was mainly premised on foreign policy and economic considerations and the contours of this policy did not include the domestic concerns with international implications for India, Myanmar and Thailand.
4. Thailand and South-East-Asia are home to large overseas communities who have, by and large, integrated well with the host communities.
5. India and Thailand have for some time been victims of domestic and externally fomented terrorism and destabilization, the events of September 11 and more recent developments in India and Thailand and elsewhere have brought into sharp focus the dangers of well organized and funded groups at times sponsored by states and supported by a network of global terrorist outfits having nexus with criminal and drug gangs.
6. The issues of drug and human trafficking, crime, including transnational crime, cyber crime, trafficking in counterfeit currency, international piracy, cross border networking of criminals and anti-social elements are closely related to the issues of religious fundamentalism and terrorism.
7. The presence of the large Indian Diaspora in Thailand and other countries of South-East Asia. According to one estimate there could be up to a million or more persons of Indian origin and Indian citizens in ASEAN alone. While the Indian Diaspora in Thailand, as elsewhere, has made a very significant – often underestimated and unrecognized - contribution to their adopted country as also to developing relations between their adopted country and India, optimal use of this extremely significant shared asset has not yet been made by the host countries in South-East Asia and India.
8. The most significant and enduring convergence of interest is in the area of trade, technology and economic relations. Thailand and ASEAN are already significant partners of India's in trade and commerce. The two-way trade between India and ASEAN in 2005 had reached a figure of US dollars twelve billion approximately making ASEAN a major trade and investment partner of India's. There are also growing two-way investments. This, however, is only a fraction of what is possible. Thailand is a major partner of India's with relations growing very rapidly. Contrary to popular belief, our two economies are not necessarily competitive in every area; there are significant complementalities too.
9. There is a strong common interest in promoting sub-regional, regional and international tourism in the Bay of Bengal space, the Buddhist tourist circuits and in showcasing our cultural and historical places that are very similar. HRD (Human Resource Development), education, science and technology, information technology, biotechnology etc. are also areas in which the two countries have a

common interest. India is well placed to share her experience and indigenously developed expertise in some of these areas.

10. India-Thailand convergences and shared interests also extend, in the contemporary context, to the sub-regional and regional canvas. In pursuance of India's look east policy, India became a sectoral dialogue partner of ASEAN in 1993 and a full dialogue partner in 1995. Today India and Thailand have far reaching cooperation arrangements as dialogue partners.

India, Thailand Get Closer :-

India and Thailand are both wary of China. So, is the fact that the two are coming closer together a good thing not just for bilateral relations, but the region's overall development? Perhaps, but China won't like it. This is especially the case with India recently embarking on an intensified diplomatic drive to deepen its strategic ties with countries like Japan, Vietnam and South Korea. There are already some major signs of increased cooperation between India and Thailand. And, if anything, the just-concluded India visit by Thai Prime Minister Abhisit Vejjajiva has boosted ties further. Vejjajiva held a summit meeting with Manmohan Singh on April 5 at which both leaders agreed to give high priority to the proposed tri-lateral highway project linking India and Thailand through Burma. This project would take the Indo-Thai relationship to beyond just air connectivity, as more than 800,000 Indians visit Thailand every year, while an almost equal number of Thai tourists visit India. The highway, while promoting trade and people-to-people contacts, will also help revive shared historical and cultural heritage.

In addition, the two prime ministers also agreed to take their already blooming relationship to the next level by finalizing bilateral agreements such as the Extradition Treaty, Mutual Legal Assistance Treaty in Civil and Commercial Matters and the Agreement on Transfer of Sentenced Persons. They stated that they looked forward to the India-ASEAN Commemorative Summit to be held in New Delhi next year.

The significance of Vejjajiva's two-day trip to India is underscored by the fact that he came here on a state visit—in international diplomacy, a state visit is the highest level of visit by a foreign dignitary, as opposed to a 'working visit' or an 'official visit.' Finally, the joint statement issued at the end of the visit said the two sides had also agreed to double their current bilateral trade of $6.7 billion by 2014. This target can likely be easily achieved as the two sides are at an advanced stage of negotiations for a comprehensive Free Trade Agreement that should be finalized within the year. Importantly, India also encouraged Thailand to make significant investments in two of its major sectors: infrastructure and agro-processing. India-Thailand relations have gone from strength to strength in recent years, and will likely continue on an upward trend—whether China likes it or not.

India has 'globalised' cautiously and slowly as compared to Thailand. Both have faced problems in this regard. There is acute need for us to compare notes so that we may avoid the pitfalls of globalization and unrestricted and excessively rapid integration with the

global economy. India could profit from the experience of Thailand, which has managed globalization with comparative ease and success. Thailand also has a longer and more intimate experience of dealing with foreign investments and privatization. Here again, India could profit from Thailand's experience. Thailand has been practicing market driven economy for over three decades now. How did Thailand cope with the resulting social and economic challenges? Finally, both India and Thailand are founder members of WTO and the Bretten Woods Institutions. Can a common and coordinated approach be evolved on selected issues between India and Thailand? Briefly, there is much scope and a real convergence of interest between India and Thailand in the economic, financial and commercial areas. As one of the largest and fastest growing economies of the world, India offers unique cooperation possibilities for the mutual benefit of the two countries. Both countries will have to shed their old entrenched mindsets and evolve a new partnership based on our unique convergences and mutual interests.

In the present context and circumstances are propitious for India and Thailand to renew, reinvigorate and reshape their interface. Fortunately, there is an acute realisation in both countries of this and there are no bilateral irritants or contradictions. In fact, there are enough bilateral, sub-regional, regional and global imperatives for India and Thailand to carve out a new relationship drawing strength and inspiration from our shared history and civilisational bonds but based on the new emerging and all encompassing convergences and shared interests. Thailand is India's gateway to the Asia-Pacific and India is Thailand's to the West. Now a days, both the two governments are serious towards above said issues. Relations must be based on perceived contemporary and future national interests in which both sides have a mutual stake. Culture and history can at best provide a basis but it cannot be a substitute for substance. India and Thailand have lost much time in rediscovering each other. No further time should be lost by these two great countries in forging a durable partnership, which will reinforce the logic of shared interests. The window of opportunity for India and Thailand is small and short; we must take immediate pragmatic steps and make serious efforts to heed the call of our times.

Today India and Thailand have far reaching cooperation arrangements as dialogue partners. Our dialogue has now been upgraded and institutionalized enabling India and Thailand to exchange views at the highest level. The areas of cooperation include trade and commerce, science and technology including information technology, HRD, tourism, investments and joint ventures and exchange of information and experiences on global and regional economic issues, financial issues, terrorism and narcotics and on issues of a macro and sub-regional nature. Both India and Thailand are committed to expanding people-people links in all areas drawing inspiration from our age-old links. India is also a member since 1996 of the ASEAN Regional Forum (ARF). Under the aegis of this Forum, India participates in activities ranging from regional confidence building measures, preventive diplomacy and conflict management, security of the sea-lanes, piracy, natural disasters, disarmament related issues, terrorism and trans-national crime to strategic and security

issues affecting the region or the members of ARF. India and Thailand as member of ARF have constructively cooperated on various issues. At the track-II level, both India and Thailand are members of the Council For Security Cooperation in the Asia –Pacific [CSCAP] and other bodies. This regional and sub-regional super structure reinforces the bilateral arrangements we have evolved to exchange views with each other on issues of the moment. Although, India is not a member of the Asia-Pacific Economic Community (APEC), there is no doubt that India's participation in such fora is a matter of time as without India these organizations are meaningless. Thailand and India could usefully cooperate in these regional arrangements as well. The East Asia Summit mechanism offers an opportunity to create a pan-Asian platform at the summit level to address common issues on the Asia-pacific canvas. Students and scholars from the two regions could form an important bridge and can become a shared asset. Culture and our age-old civilisational common heritage are the inspiration and the bedrock of our contemporary relations. This, indeed, was the theme of Prime Minister Narasimha Rao's address when he in April 1993 inaugurated the India Studies Centre at Thammasat University.

India and Thailand, even in the contemporary context, and notwithstanding their present low level of bilateral relationship are natural partners with strong and abiding shared bonds of history, geography, strategic interests, economic and commercial inter dependence and a common stake in maintaining and preserving our unique culture and way of life. There are, however, many impediments to be overcome. First and foremost, both India and Thailand had developed, particularly during the cold-war period and in the colonial era, mindsets, which often mitigated against looking at each other with greater empathy and understanding. Our respective perceptions on many issues differ. While India did not always find ASEAN supportive of her core concerns, ASEAN too has had similar complaints about India. There are influential groups in some ASEAN countries, which have entrenched perceptions of India as a poor, backward, under developed country with overwhelming domestic and regional tensions whose future is hopeless. India's close links with the erstwhile Soviet Union during the cold-war years and its fall out on South-East-Asia was seen to be a negative factor inhibiting closer relations. They, therefore, preferred to look eastwards towards the Pacific rather than towards India. Some ASEAN countries' membership of western military alliances and India's policy of non-alignment reflected the cold-war period imperatives of the two countries. As pointed out, India's close relations with the erstwhile Soviet Union and indifferent relations with the West, particularly the US, were also factors in keeping the two countries far apart. China's shadow too loomed large and was a factor in the negative perception of India. The changing ethnic and social fabric of South-East-Asian societies, at times, obscures the age-old civilisational links between our two regions. Indeed, many Indian leaders, scholars and opinion makers may have made the mistake of overstating this age old cultural bond, particularly in the contemporary context. In so far as India is concerned, we woke up too late in recognizing the importance and indispensability of strong ties with South- East -Asia and in evolving a look east policy.

CHALLENGES TO HIGHER EDUCATION

-Dr. Sushma Nishad
Assistant Professor Senior
Head of the Department - Education
Department, D.A.-V,
College Civil Lines, Kanpur

The early growth phase of higher education was associated with colonialism. Its access wag thus partial and its teaching and research programs were mostly defined by colonial state policies .It is only after independence, that the state promoted education as an instrument of social development . We indeed had a very impressive growth since then the number of university level institutions has increased from 18 in 1947 to 307 by the end of 2004 .The student enrolment has also grown impressively from 2,28,804 in 1947to 94,63,821in2002-2003 . Despite such an impressive grown in infrastructure under higher education which is rated to be the second largest after the USA in the world , it hardly covers seven percent of the population which the lower then even that of developing countries such as Indonesia (11 percent) ,Brazil (12percent),and Thailand (19percent) .there is yet another distorting phenomenon under higher education : the discipline –wise enrolment of student is not encouraging with enrolment into science stream standing at19.7 as aginst42.7 percent into arts faculty and 20.7 percent into commerce including management (source:UGCAnnual Report 2001-01).

Higher education in qualitative terms in depicting a still agonizing scenario that has been aptly captured by the Ramamurti Committee Report (1990): there are serious complaints at all levels about the lack of responsiveness in the system .Academic activities are at a low ebb and the academic calendar itself gets seriously disrupted almost every year. The system of higher education continues to encourage memorization facts and regurgitation rather than creativity .While the result in higher education are clearly determined by the foundation laid in school education, we cannot wait for the ills of school education. We cannot ignore the fact that we do not have many colleges today which can pride themselves of imparting under graduate education of the higher quality, comparable to some of the well known instituitions in the world .The finding under this report through, old still holds good and for that matter the current situation may be wrose than what has been described in the report.

With the advent of reforms and the resulting concern for growing fiscal deficit , the government id slowly withdrawing from funding higher educations as could be gauged from the fact that the outlay for the student declined from Rs.7676/- at 93-94 price levels to Rs.5873/- in 2001-02 (budget estimates).with all these constraints ,we are still continuing with the system of affiliation which was started in1857.indeed we made the affiliation

system more complex by allowing infinite number of college affiliated to a single university with the result ,the already depleted financial recourses are used more administrative purpose than for improving academic recourses .The net result of all this is overall fall in academic standards .The current plight of our university system witch is entrusted with the responsibility disseminating higher education has been well described Anndre Beteile: our universities are simply functioning as a degree giving institution concentrating of conducting examination rather than becoming a system that transmits , generated and interprets knowledge.

Need For Private Participation in Higher Education :

The world bank report of 1994 highlights the worth of higher education where in, it is considered the institute of higher learning benefit state and society in several ways: they equip individuals with advanced knowledge and skill to discharged responsibility in government business and professions; produce new knowledge through research and at least serve as conduit for the transfer, adaptation and dissemination of knowledge generated elsewhere in the world. the task force constituted by world bank and UNESCO during own rules for imparting higher education including prescribing the necessary infrastructure etc, were at time found to function at crossroads with UGC. This has only created disputes resulting in innumerable court case. Even otherwise; too many regulators are known to create more problem than solve them. Taking a cue from experience it is time that we had one it is time that we had one central body to over see the functioning of universities-both in public and private management and evaluate them on prescribed quality parameters to ensure excellence in education.

Institutional Support for Funding Pursuit of Higher Education :

It is obvious that private university, unlike public universities would be recovering their cost by charging fee from student proportionate to their expenses. Such fee structure may not always be with in the reach of common man. A need thus arises to fund such candidates. it is to be noted hear that if Harvard or Stanford or MIT are being fed by a continuous stream of student and they are able to maintain such reputation for excellence in education , it is only because there is an institutionalized support available to the student to borrow money, purse studies ands pay it back from there future earning with no hassles attached . It is not as formalized and simplified as in the us. There is thus a need to urgently tramline and make loaning system 2000 has also observed that higher education helps increase waged and productivity that directly enrich individuals and society. As against these world opinions the ministry of finance opines I its paper on government subsidies (1997) that higher education is a 'non-merit' good based on the reasoning that higher education benefited individuals more than the society . The Birla Ambani report submitted to the prime minister too suggested that government subsidies to higher education should be minimal and the funds thus saved should be invested in expanding faculties at the primary and secondary stages of education.

There is another strong argument in favors of private participation in higher education user payments improve quality of education. When students pay directly, they tend to become actively involved to ensure that they receive benefits in return. Secondly, the monitoring by parents that is supposed to accompany user payments can improve both the quality and cost effectiveness of education. There is thus a strong argument favoring establishment of private universities for imparting higher education which is a must in the globalized economy to reap economic benefits by leveraging on comparative advantage.

It is however heartening to note that some states such as Chhattisgarh, Uttaranchal, Tripura, Sikkim etc, have already passed private universities bills and other states like Rajasthan, Himachal Pradesh, Punjab, etc, are reported to be in the process of coming up With legislations for establishment of private universities.

It is essential that the functioning of such a central authority is transparent and its decisions are not arbitrary. To ensure such transparent governance the authority should prescribe its parameters for granting permission to establish a university. Similarly. It should also make it known to the participating agencies as to on what lines the performance of university is assessed to declare it as eligible for its continuation or not. There is also a case to reexamine the role of professional counsels such as MCI, AICTE, etc. that have been established in the recent past to oversee the functioning of medical and engineering institutes etc. These bodies that have evolved their beginning of partial privatization of the existing teacher education institution in the country. If it is done, the money earned by the teacher educations will have to be ploughed back to the educational sector for its own improvement. This in other words is business trend in education where money is earned and the same is put back in to the system to sustain it make it stronger.

Teacher education institutions currently represent a collection of individuals trained to a high level. Most of these academics have specialist knowledge in order that they might become as expert in that part of their subject as it is possible to be. They have no requirement to broaden their knowledge to deal with vagaries of business, nor incentives to change topics due to the disinterest of the public at large. This means that teacher education institutions contain a repository of knowledge and expertise different from those of business houses. Any change to the nature of academics with respect to work that they carry out may change the nature of requirement of this repository of knowledge. It is uncertain whether teacher education institutions provide better support by being more like business or by providing a wide –ranging collection of knowledge and expertise.

Bibliography

1. Felsteed et. Al. (1997) 'Getting the Measure of Training' Leeds centre of industrial policy and performance.
2. Finegold D, (1999), 'creating Self-sustaining and high Skill Ecosystem' Oxford review of Economic policy, 13; 2 P68
3. Lvan Turok (1993) loose Connection? Foreign Investment and local linkages in Silicon Glen Strathclyde. University of StrathclydeP4
4. Peter Williams, (19950, Universities Waste Science Funds Nature
5. Roger Bootle (1994), Our Competitive Future: building the knowledge Driven Economy' Oxford Review of Economic Policy, 33:12, P32

"Dr. B.R. AMBEDKAR VISION : MYTH AND REALITY"

-Mr. Pramod Chand
Research Scholar
Law faculty
B.H.U., Varanasi.

Ambedkar ideology is basically opposed to Hindu Society based on Varna, caste and untouchability, which has cruelly crushed the Shudra or untouchables in India, and that situation still exists in various ways. In his book, Annihilation of caste he expressed the following idea:

1. The organization of Hindu Society on the basis of four classes is harmful, because it is the result of a system, wherein people are demoralized by not all allowing then to hold arms.
2. The Hindu Society should be re-organized on a religious basis which may accept the principles of liberty, brotherhood and equality as the pillars of good governance.
3. For achieving these ends, religious consciousness strengthening the existing class system should be obliterated by legal measures.
4. Consciousness of being pure of caste and class should be obliterated as also the divine origin and the basis of Shastras.

But is we see the present social structure of our country, we can say that not only social inequality but also economic and political inequality is sound between the highest and the lowest casts. At present, the power struggle between different dominant castes and between the highest and the lowest caste is very common, which led to caste conflicts. The so called dominant or high castes are not allowing the lower castes to reach upto their level. In village the lower castes are still economically dependent on the dominant pleasant castes. The position of the down trodden communities is villages seems to be very low and they log behind in many spheres.

Dr. B.R. Ambedkar sought to achieve these objectives through the constitution of India by incorporating in it the following principles : -

i) Making the Indian constitution workable, flexible enough and yet strong enough to hold the country together both in peace and war time.
ii) Incorporating the principle of one man, one value and one vote. Thus, the constitution of Indian accepted an individual, and not a village, as a unit.
iii) Abolishing untouchability and forced labour to achieve the ideal of "One man, and one value" and "One man, one Vote" and placing all people equal before law; securing equal protection of law for every citizens as also freedom of profession and equality of opportunity. Thus, every citizen of India is equal before the law and there

is also equal protection of law for all citizens without any discrimination on the basis of caste, religion, sex or status.

iv) Incorporating the right to constitutional remedies for making the right real. His aim was to save Indian democracy from confusion and anarchy on the one hand, and communalism and communism on the other.

Practically, even now the constitutional abolition of untouchability and its practice in form with a view to promoting a new pattern of social behavior has unfortunately not reached the expectations of Dr. Ambedkar. Today, the scheduled castes still remain poor, exploited and subjected social, economic and political disabilities on the ground of untouchability.

The clauses relating to equality under the Indian constitution. Dr. Ambedkar said that political democracy could not survive in the absence of social democracy. In his opinion social democracy assures and implements liberty, equality and fraternity as principles of life. Dr. Ambedkar advised the scheduled castes to safeguard their privileges. It is their right to refuse any change if they self no guarantee was given to safeguard their rights.

Reservation or compensatory discrimination is justified in our social and economic condition still the weaker section of society are able to compete without any special help. The main problem lies in the identification of the person who are educationally and socially backward and are entitled to constitutional benefits.

We can summarize the vision of Dr. B.R. Ambedkar regarding the policy of reservation in the following points: -

i) Policy of reservation or protective discrimination was designed primarily to remove the scourage of untouchability from Indian society, and with it the role of caste in public life.

ii) Dr. B.R. Ambedkar was against any special protection for the scheduled caste and the scheduled tribes under the constitution, as feared that instead of removing the disabilities of the people, it might perpetuate the social aloofness.

iii) Dr. Ambedkar said that castes would gradually cease to make any difference in public life.

iv) He wanted to create a philosophy which would answer the need of the lowest in the society in which he was living.

v) Reservation policy should be periodically reviewed.

vi) A Backward community is a community which is backward in the opinion of the Government.

Vii) The clauses relating to equality have special reference to backward classes. The political democracy could not survive in the absence of social democracy. The social democracy assures and implements liberty, equality and fraternity as principal of life.

viii) The term 'Backward clauses' would cover three principal components, the scheduled castes, the scheduled tribes and the other backward classes.

If we start our Journey from the very first cash relating to reservation i.e. the Champakam case AIR 1951 S.C. Page 229, in which the S.C. rejected to countenance any notion of group rights, we can say that the Court's interpretation in this case achieved the object intended by Dr. Ambedkar when he rejected Prof. Shah's amendment (Constitutional Assembly Debate Vol. VII Page 655).

But Governments reaction to these verdicts was swift clause (4) of Article 15 was added in 1951 by the constitution (first) Amendment Act 1951. Dr. Ambedkar as a Chairman of the Drafting Committee, opposed the amendment as providing an opening for segregate facilities.

The first case relating to the problem of identification of backwardness was Balaji case (AIR 1963 S.C. Page 649) in which the court recognized caste as a relevant factor in determining the social backwardness of a class of citizens.

It must be noted that Dr. Ambedkar was against of any type of caste criteria and in the court excluded the caste in the identification process of backwardness and occupation and income were made the basis for identification but a caste is also a class of citizen and if a caste as a whole is socially and educationally backward reservation can be made in favour of such a caste.

The scheduled castes are not castes within the meaning of Article 16(2) but they are collection of castes, races and groups and Article 16(4) is one mode of reconciling the claims of backward people and the opportunity of free competition for which the forward section are ordinarily entitled.

We can say that the above ruling is very similar to Dr. Ambedkar's thinking.

Why Supreme Court gave more importance to the caste criteria ? The answer is giving that caste is the primary index of social backwardness. The court also recognized that in Indian context the lower castes are to be treated as backward classes.

Dr. Ambedkar which he gave at the time of first amendment to the constitution that – "Backward classes are nothing else but a collection of certain castes."

The identification and designation of backward classes by the Government had to meet the constitutional requirements of the fundamental rights. However the Governments particularly in south Indian could not resist the pressure of those castes and communities which used to enjoy the benefit of caste based reservations in pre-constitution days and of such castes and communities which had become economically powerful after land reforms.

These castes and communities used their electoral clout to secure reservation in their favour and those who failed took matter to the courts. On the court quashing the reservation scheme, the Government concerned appointed on other committee or commission to identify the backward classes. This gave rise to another round of pressure building and litigation.

The next important issues is claim of merit i.e. performance on test, examination, interviews etc. rests upon the supposed consequences. Merit depends upon showing of

sufficient grit and determination, intelligence, diligence, potentiality and inclination towards job sincerely. Here, Dr. Ambedkar example is worth citing. In his matriculation examination, be secured only 37.5% of the marks, the minimum passing was 35%. If his potentialities were to be Judged by the said marks, the Country would have lost the benefit of his talent for all time to come.

The obvious conclusion is that reservation is not anti-maritarian.

The divergence between Ambedkar's vision of reservation and that of the Mandal commission are quite remarkable. Dr. Ambedkar's policy of reservation, or protective discrimination was designed primarily to remove the scourge of untouchability from Indian society, and with it the role of caste in public life. In case of Mandal the driving logic is that caste identity is a permanent asset to be exploited for political and economic ends. On the other hand, the Supreme Court in Indra Sawhney case has rejected the argument that making caste as a basis for the identification of backward classes will perpetuate casteism in the society.

Dr. Ambedkar was against any special protection to the depressed classes. In other words, he was against any kind of reservation and he believes in the principle of equality but the Government policy is very opposed to his vision and if we see the government's reaction to the Indra Sawhney case. It becomes quite clear that the politics of reservation is based upon the casteism, differentiation and division of society etc. No doubt, the nation has a special obligation towards the weaker segments of society.

If we see the basic difference in American and Indian Social structure, it attracts different consideration. In America a tiny number of minority of Negroes had suffered discriminatory treatment at the hands of white people. In India the majority of population had suffered discriminatory treatment at the hands of a handful dominant cast people controlling the levers of power. Thus, American style of justification for positive discrimination for positive discrimination of protective discrimination is based on ground of utility whereas the Indian style of justification is based on the ground of constitutional rights under Article 15(4), Article 16(4), Article 45 and so on. The moving spirit behind reservational justice is not equalitarian but equalizational justice.

Now these is a need to understand and evaluate Ambedkar's philosophy, mission and the relevance of his ideas, thoughts and ideals in a proper perspective for an honest movement for removing inequality, casteism, untouchability and hatred giving practical shape to freedom, equality, democratic values and humanistic ideals enshrined in the Supreme law of the land the constitution of India.

REFERENCE

1. Constitutional Assembly Debate Vol. VII Page 655.
2. Annihilation of caste – Dr. B.R. Ambedkar
3. The Constitution of India, 1950.

US POLICY TOWARDS PAKISTAN IN OBAMA'S PERIOD : CHAINGING PERSPECTIVE

-Ruchi Singh
Research Scholar
Department of Defence & Strategic Studies
University of Allahabad

No single year has reflected and effected more significant changes in the Islamic world than 1979. Pakistan, Afghanistan, and Iran were epicenters as well as tributaries, and confluences of the history-making events of that year.

A stable, democratic, prosperous Pakistan is considered vital to U.S. interests. U.S. concerns regarding Pakistan include regional and global terrorism; Afghan stability; democratization and human rights protection; the ongoing Kashmir problem and Pakistan-India tensions; and economic development. A U.S.-Pakistan relationship marked by periods of both cooperation and discord was transformed by the September 2001 terrorist attacks on the United States and the ensuing enlistment of Pakistan as a key ally in U.S.-led counterterrorism efforts. Top U.S. officials have praised Pakistan for its ongoing cooperation, although long-held doubts exist about Islamabad's commitment to some core U.S. interests. Pakistan is identified as a base for terrorist groups and their supporters operating in Kashmir, India, and Afghanistan. Pakistan's army has conducted unprecedented and largely ineffectual counterterrorism operations in the country's western tribal areas, where Al Qaeda operatives and pro-Taliban militants are said to enjoy “safe haven.” U.S. officials increasingly are concerned that the cross-border infiltration of Islamist militants from Pakistan into Afghanistan is a key obstacle to defeating the Taliban insurgency.

Historical Engagements:

The long and checkered Pakistan-U.S. relationship has its roots in the Cold War and South Asia regional politics of the 1950s. U.S. concerns about Soviet expansionism and Pakistan's desire for security assistance against a perceived threat from India prompted the two countries to negotiate a mutual defense assistance agreement in 1954. By 1955, Pakistan had further aligned itself with the West by joining two regional defense pacts, the South East Asia Treaty Organization and the Central Treaty Organization (or “Baghdad Pact”). As a result of these alliances, Islamabad received nearly $2 billion in U.S. assistance from 1953 to 1961, one-quarter of this in military aid. Differing expectations of the security relationship have long bedeviled bilateral ties. During and immediately after the Indo-Pakistani wars of 1965 and 1971, the United States suspended military assistance to both sides, resulting in a cooling of the Pakistan-U.S. relationship and a perception among many in Pakistan that the United States was not a reliable ally. In the mid-1970s, new strains arose over Pakistan's efforts to respond to India's 1974 underground nuclear test by seeking its own nuclear

weapons capability. U.S. aid was suspended by President Carter in 1979 in response to Pakistan's covert construction of a uranium enrichment facility. However, following the Soviet invasion of Afghanistan later that year, Pakistan again was viewed as a frontline ally in the effort to block Soviet expansionism. In 1981, the Reagan Administration offered Islamabad a five-year, $3.2 billion aid package. Pakistan became a key transit country for arms supplies to the Afghan resistance, as well as home for some three million Afghan refugees, most of whom have yet to return.

Despite the renewal of U.S. aid and close security ties, many in Congress remained troubled by Pakistan's nuclear weapons program. In 1985, Section 620E(e) (the Pressler amendment) was added to the Foreign Assistance Act, requiring the President to certify to Congress that Pakistan does not possess a nuclear explosive device during the fiscal year for which aid is to be provided. With the Soviet withdrawal from Afghanistan, Pakistan's nuclear activities again came under intensive U.S. scrutiny and, in 1990, President Bush again suspended aid to Pakistan. Under the provisions of the Pressler amendment, most bilateral economic and all military aid ended, and deliveries of major military equipment ceased. In 1992, Congress partially relaxed the scope of the aid cutoff to allow for food IB94041 05-09-06 CRS-3 assistance and continuing support for nongovernmental organizations. Among the notable results of the aid cutoff was the non delivery of F-16 fighter aircraft purchased by Pakistan in 1989. Nine years later, the United States agreed to compensate Pakistan with $325 million in cash payment and $140 million in goods, including surplus wheat. After more than a decade of alienation, U.S. relations with Pakistan were transformed in dramatic fashion by the September 2001 terrorist attacks on the United States and the ensuing enlistment of Pakistan as a pivotal ally in U.S.-led counter terrorism efforts.

Obama's Period: Shifting Policy :

The Obama Administration states an intention to continue pursuing close and mutually beneficial relations with Islamabad. As part of its “new strategy” for Afghanistan, the Administration seeks development of a “more coherent” Pakistan policy to include conditioning U.S. military aid to Islamabad on that government's progress in combating militancy and also tripling nonmilitary aid to improve the lives of the Pakistani people. A Special Representative was appointed to coordinate U.S. government efforts with both Pakistan and Afghanistan. Pakistan is among the world's leading recipients of U.S. aid, obtaining more than $5.3 billion in overt assistance since 2001, including about $3.1 billion in development and humanitarian aid. Pakistan also has received about $6.7 billion in military reimbursements for its support of counterterrorism efforts.

Pakistan's macroeconomic indicators turned positive after 2001, with some meaningful poverty reduction seen in this still poor country. However, economic conditions deteriorated sharply in 2008. Democracy has fared poorly in Pakistan, with the country enduring direct military rule for more than half of its existence. In 1999, the elected government was ousted in a coup led by Army Chief General Pervez Musharraf, who later

assumed the title of president. Musharraf retained the position as army chief until his November 2007 retirement. Late 2007 instability included Musharraf's six-week-long imposition of emergency rule and the assassination of former Prime Minister and leading opposition figure Benazir Bhutto. However, February 2008 parliamentary elections were relatively credible and seated a coalition led by Bhutto's widower, Asif Zardari, and opposed to Musharraf's continued rule. The coalition's August vow to launch impeachment proceedings spurred Musharraf to resign the presidency and exit Pakistan's political stage. Zardari subsequently was elected as the new President. The Bush Administration determined that a democratically elected government was restored in Islamabad, thus permanently removing coup-related aid sanctions.

There exist widely-held suspicions among foreign governments and independent analysts alike that Islamabad's civilian government does not fully control the army, that the army does not fully control the intelligence agencies, and that the these intelligence agencies have lost their ability to rein in the very militant groups they helped to create. Moreover, anti-American sentiments are widespread in Pakistan, and a significant segment of the populace has viewed years of U.S. support for President Musharraf and the Pakistani military as an impediment to, rather than facilitator of, the process of democratization there. Underlying the anti-American sentiment is a pervasive, but perhaps malleable perception that the United States is fighting a war against Islam. The Bush Administration continued to proclaim its ongoing support for Musharraf even after his imposition of emergency rule and the later sweeping rejection of his parliamentary allies by Pakistani voters. However, in 2008, the Administration showed signs of a shift in its longstanding Pakistan policies, in particular on the issue of democratization.

In 2008, Islamabad's new civilian ruling dispensation was welcomed by U.S. leaders. In July, President George W. Bush hosted Prime Minister Yousaf Raza Gillani at the White House, where the two leaders issued a joint statement reaffirming the U.S.-Pakistan "Strategic Partnership."6 In September, Benazir Bhutto's widower Asif Ali Zardari—a controversial figure long bedeviled by corruption charges who had taken the reins of her Pakistan People's Party (PPP) upon her demise—ascended to the Pakistani presidency with the congratulations of senior U.S. officials. Later that month, then-Deputy Secretary Negroponte hosted Foreign Minister Shah Mehmood Qureshi in Washington for the third round of the Pakistan-U.S. Strategic Dialogue, where the two sides "reaffirmed their commitments to a wide-ranging, substantive, and long-term strategic partnership."

A New Concentration on Stabilizing Pakistan:

As part of its "new strategy for Afghanistan," the Administration of President Obama intends to substantially increased the number of U.S. troops there. A key aspect of the new approach is the development of a more coherent Pakistan policy to include conditioning U.S. military aid to Islamabad on that government's progress in combating militancy and also the tripling non military aid to improve the lives of the Pakistani people, with a particular focus

on the FATA region. President Obama, Vice President Joseph Biden, and Secretary of State Hillary Clinton all supported the Enhanced Partnership with Pakistan Act as Senators(S. 3263) in the 110th Congress, and they are said to look forward to working with the 111th Congress on any new version of that legislation that may arise. In this regard, the new Senate Foreign Relations Committee Chairman, Senator John Kerry, has said he will seek swift passage of a major new aid package that includes a demand for greater accountability from Pakistan's military, calling Pakistan "Ground zero for the terrorist threat we face."

As President-elect, Barack Obama asserted cannot be "solved"without "solving Pakistan and working more effectively with that country:

What I want to do is create the kind of effective, strategic partnership with Pakistan that allows us, in concert, to assure that terrorists are not setting up safe havens in some of these signals. He's indicated that he recognizes this is not just a threat to the United States, but it is a threat to Pakistan as well……I think this democratically-elected government understands that threat and I hope that in the coming months that we're going to be able to establish the kind of close, effective, working relationship that makes both countries safer.

Pakistani President Asif Zardari has said his country looks forward to a "new beginning" in bilateral relations, but repeated his admonition that Pakistan "needs no lectures on our commitment (to fighting terrorism). This is our war." He has asked the Obama Administration to strengthen Pakistan's democracy and economic development in the interest of fighting extremism. Despite Pakistani hopes that President Obama will more energetically engage diplomatic efforts to resolve the Kashmir problem, the administration has offered no public expressions of support for such a shift. Secretary of State Clinton has recognized the dangers of rising tension in Kashmir while also deferring calls for greater U.S. involvement there, saying the U.S. role will continue to be as it was under the previous Administration: settlement facilitation, but no mediation.

Changing Perspectives in Policy Making:

The United States needs a strategic change in its Pakistan policy. A way has to be found to harmonize US strategic interests, Pakistan's core national interests, and people's aspirations for empowerment and good governance. Pakistan will remain a crucial partner in fighting extremism and terrorism, but only a stable and reformed Pakistan can be a useful partner. Therefore, the biggest challenge for the United States is to craft policies in and towards Pakistan that help not just the latter's governing elite and American strategic interests but the people of Pakistan and a reformed vision of Pakistan. A reformed Pakistan headed toward moderation is likely to find America's interests to be consistent with its own.

Given the enormity of the self-inflicted damage to the country, mere survival has been a great achievement. Hopefully, the Swat operation represents the first stirrings of the changes that are necessary to ensure not just that the country survives but that it prospers.

Numerous observers are identifying Pakistan as being among the most important foreign policy issues facing President Obama. In addressing the several policy dilemmas

posted by Pakistan, most analyses urge a greater U.S. emphasis on diplomacy and development aid; many include a corresponding call for de-emphasizing strictly militarized approaches to regional issues. Some notable recent commentary includes:

A New Course for Pakistan, from the Center for Strategic and International Studies, bases its recommendations for U.S. policy on the findings of more than 200personel interviews in Pakistan during April 2008. In concluding that Pakistanis broadly recognized early 2008 as a critical moment in the country's history, the authors endorse a more strategic U.S. approach to Pakistan that would include decreasing reliance on the Pakistani military. They urge a closer U.S. focus on strengthening rule of law and governance in Pakistan, as well as on stabilizing that country's economy and ensuring security both along the Pakistan-Afghanistan border and across the country.

The Pakistan Policy Working Group, comprised of 13 Washington-based experts, released a major report on then future of U.S.- Pakistan relations, which argues that, "Pakistan may be the single greatest challenge facing the next American President." The report offers a series of key recommendations for U.S. policy, including exhibiting patience with Islamabad's new civilian leadership while working to stabilize their government with economic aid and diplomacy.

In a late 2008 Foreign Affairs article, two senior regional analysts warn that neither adding more U.S. and Western troops in Afghanistan nor increasing cross border attacks into Pakistan is likely to improve the regional security situation. Instead, they argue for political and diplomatic initiatives that would distinguish between local militants and global jihadists such as Al Qaeda, offer inclusion to a wide array of reconcilable insurgent element in both Afghanistan and Pakistan, and include a major development initiative to boost living standards there. They view a U.S. policy of "pressuring" Pakistan to be inherently flawed in the absence of efforts to address Islamabad's fundamental sources of insecurity.

Partnership for Progress, from the Centre for American Progress, reviewed the challenges and new opportunities presented by Pakistan, and recommended pursuit of U.S. policies that recognize the regional aspects of Pakistan's security orientation; better integrated international support; move beyond a narrow focus on military and intelligence cooperation; encourage democratization and civilian governance oversight in Islamabad; enhance transparency and accountability in U.S. assistance efforts; reform U.S. national security institutions so as to strengthen non-military tools; and create a long-term and proactive engagement.

Reference

- Bruce Riedel, "Pakistan and Terror: The Eye of the Storm," Annals of the American Academy of Political and Social Science, 618, 31, July 2008.
- Kenneth Ballen, "Bin Laden's Soft Support," Washington Monthly, May 2008.
- Talat Masood, "Managing Pakistan-U.S. Relations" (op-ed), Hindu (Chennai), June 25, 2008.
- "Pakistanis Hope U.S. Under Obama Will Be Less Bossy," Reuters, November 5, 2008.
- John Kerry, "Pakistan Needs Our Support" (op-ed), Washington Times, January 23, 2009

राजनीतिक सहभागिता : समाजशास्त्रीय सैद्धान्तिक विश्लेषण

–डॉ0 जय शंकर पाण्डेय
विभागाध्यक्ष
समाजशास्त्र विभाग
डी0ए0वी0 कालेज, कानपुर

राजनीति व्यक्ति चेतना की सर्वाधिक तर्क संगत एवं संगठित अभिव्यक्ति है। इस कारण यह समाज वैज्ञानिकों के लिए अध्ययन का विषय रही है। यद्यपि समाजशास्त्र के विकास के युग से ही समाजशास्त्री राजनीतिक शक्ति, राजनीतिक व्यवहार एवं राजनीतिक संस्थाओं के अध्यन में रुचि लेते रहे हैं। यूरोप में बेवर मिचेल, मोस्का, परेटो, सिगफ्राइड आदि विद्वानों ने समाजशास्त्र तथा राजनीति शास्त्र को एक दूसरे को इतना समीप ला दिया है कि प्रारम्भिक समाज वैज्ञानिकों ने अपने अध्ययन विशिष्ट सामाजिक अथवा राजनीतिक दृष्टिकोण तक ही न सीमित रखकर समग्र रूप में अध्ययन किए। उदाहरणार्थ टाकविले, मार्क्स, परेटो, स्पेन्सर, मेनहीम, बेवर आदि समाजशास्त्र तथा राजनीति शास्त्र दोनों ही विषयों के विचारक माने गये। द्वितीय विश्व युद्ध के पश्चात सामाजिक विज्ञानों में विविधीकरण एवं विशिष्टीकरण तथा राजनीतिशास्त्र में व्यवहारात्मक आन्दोलन जिसमें संस्थागत अध्ययनों की अपेक्षा व्यक्तियों एवं समूहों के वास्तविक व्यवहार के आनुभाविक एवं वैज्ञानिक अध्ययनों पर बल दिया जाता है तथा अन्तः शास्त्रीय उपागम के बढ़ते हुए महत्व के परिणामस्वरूप पश्चिमी विद्वानों में राजनीतिशास्त्र के समाजोन्मुख अध्ययन की एक नवीन प्रवृत्ति आरम्भ हुई। इस प्रवृत्ति के परिणामस्वरूप राजनीतिक तत्वों की समाजशास्त्रीय आधार पर खोज, चर्चा, अनुसंधान की जाने लगी। ये खोजें न तो पूर्ण रूप से समाजशास्त्रीय थीं और न ही पूर्णतः राजनीतिशास्त्रीय। अतः ऐसे अध्ययनों को एक नये नाम के अन्तर्गत रखा गयाजिसे हम राजनीतिक समाजशास्त्र के नाम से जानते हैं। उल्लेखनीय है कि समाज के सहयोगी एवं असहयोगी दोनों प्रक्रियाएं विद्यमान होती हैं। समाज का विभिन्न संस्थाओं पर प्रभाव एवं विभिन्न संस्थाओं का समाज पर प्रभाव पड़ता है। इनमें राजनीतिक संस्था मुख्य रूप से समाज पर प्रभावी डालती है। परिणाम स्वरूप सामाजिक जीवन प्रभावित होता है। इस प्रकार समाज और राजनीति के आपसी सम्बन्धों के अध्ययन करने के लिए राजनीतिक समाजशास्त्र के रूप में समाजशास्त्र की एक उपशाखा का जन्म हुआ।

राजनीति शक्ति और उसके उपयोग के सन्दर्भ में एक विवाद है जिसमें प्रतियोगी

मूल्यों, विचारों, व्यक्तियों, हितों और मांगों के मध्य अभिरुचि अथवा अधिमान्यता निहित होती है। राजनीति का अध्ययन दृश्य या अदृश्य परिस्थितियों में उस तरीके के विवरण एवं विश्लेषण से सम्बन्धित है जिसमें शक्ति प्रदान की जाती है, उसका उपयोग किया जाता है, नियंत्रण किया जाता है, किसी उद्‌देश्य हेतु प्रयोग किया जाता है, एक पद्धति जिसमें निर्णय लिया जाता है, कारक जो कि निर्णयों को प्रभावित करता है और सन्दर्भ जिसमें वे निर्णय स्थान ग्रहण करता है।[1] मैक्स बेवर ने भी 'राजनीति से अभिप्राय शक्ति विभाजन का प्रयास अथवा राज्यों या राज्यों के अन्तर्गत समूहों में शक्ति के वितरण को प्रभावित करने का प्रयास' माना है।[2]

समाजशास्त्र में स्वतन्त्र चर मुख्य रूप से सामाजिक संरचना है जबकि राजनीति शास्त्र में राजनीतिक संरचना। इन दोनों विषयों के चरों को संयुक्त करके राजनीतिक समाजशास्त्र में सामाजिक एवं राजनीतिक, दोनों प्रकार के चरों को समान महत्व देते हुए इनके पारस्परिक प्रभाव का अध्ययन करने का प्रयास किया जाता है। उल्लेखनीय है कि राजनीतिक समाजशास्त्र, समाज शास्त्र तथा राजनीति शास्त्र दोनों विषयों के पाठ्‌यक्रमों के अन्तर्गत ही पढ़ाया जाता है। समाजशास्त्री सामाजिक पहलुओं पर अधिक बल देते हैं तथा राजनीतिक समाजशास्त्र को समाजशास्त्र की एक शाखा मानने पर बल देते हैं। जबकि राजनीति शास्त्री राजनीतिक पहलुओं को अधिक प्राथमिकता देते हैं और इसे राजनीतिशास्त्र का ही एक भाग मानते हैं।[3]

राजनीतिक व्यवहार का समाजशास्त्रीय दृष्टिकोण से अध्ययन करना इस शोध का लक्ष्य है। अतः उसे परिभाषित करना समीचीन प्रतीत होता है। डाउसे तथा ह्यूज के अनुसार 'राजनीतिक समाजशास्त्र समाज शास्त्र की एक शाखा है जिसका सम्बन्ध मुख्य रूप से राजनीति और समाज में अन्तःक्रिया का विश्लेषण करना है।[4] इसी प्रकार जेनोबिट्‌स ने राजनीतिक समाजशास्त्र को समाज के सभी संस्थागत पहलुओं की शक्ति के सामाजिक आधार से सम्बन्धित माना है। इस परम्परा में राजनीति समाजशास्त्र सामाजिक स्तरीकण के प्रतिमानों तथा संगठित राजनीति में इसके परिणामों का अध्ययन करता है।[5] उपरोक्त परिभाषाओं के आधार पर मुखोपध्याय ने राजनीतिक समाजशास्त्र को समाजशास्त्र एवं राजनीति शास्त्र के अर्न्तविवेचन पर समाज के प्रभाव तथा समाज पर राजनीति के प्रभाव का अध्ययन करते हैं।[6]

राजनीतिक समाजशास्त्र की उपरोक्त परिभाषाओं के माध्यम से इसके विषय वस्तु का निर्धारण इसके अध्येय पहलुओं के क्षेत्र के प्राधिकारिक वितरण के रूप में स्वीकार की जा सकती है। मिचेल[7] ने राजनीतिक समाजशास्त्र की विषय वस्तु के अन्तर्गत औपचारिक अथवा

सांविधानिक एवं औपचारिक राजनीतिक संस्थाओं, संभ्रांतजनों एवं उनकी सदस्यता, संघर्ष के आर्विभाव एवं नियमन हित समूहों एवं औपचारिक दबाव समूहों, राजनीतिक मतों के निर्माण, राजनीतिक संस्थाओं के रूप में राजनीतिक दलों तथा विभिन्न प्रकार की शासन पद्धतियों जैसे विविध विषयों के अध्ययन को सम्मिलित किया है। इसी प्रकार बविस्कर[8] ने भारतीय सामाजिक विज्ञान अनुसंधान परिषद के लिए राजनीति के समाजशास्त्र के नाम से प्रवृत्ति रपट को पांच खण्डों में विभाजित किया है जिनमें चार को राजनीतिक समाजशास्त्र के विषय वस्तु के आधार पर श्रेणीबद्ध किया है। ये हैं – (1) राजनीति तथा समाजः राजनीति में सामाजिक संस्थाओं, जाति, नातेदारी तथा धर्मकी भूमिका; (2) राजनीतिक समितियां तथा राजनीतिक संरचनाएं पंचायतें, गुट, राजनीतिक दल, विधान मण्डल, अधिकारी तन्त्र, हित समूह, नेतृत्व एवं सम्भ्रांत जन आदि; (3) राजनीतिक प्रक्रियाएं राजनीतिक सामाजीकरण, राजनीतिक भर्ती, राजनीतिक सहभागिता तथा राजनीतिक इतिहास का समाजशास्त्रीय विश्लेषण।

राजनीतिक सहभागिता व्यक्तियों एवं समूहों का राजनीतिक व्यवस्था के विभिन्न स्तरों पर संलग्नता एवं सम्मिलन है। राजनीतिक सहभागिता संलग्नात्मक प्रत्यक्ष अथवा अप्रत्यक्ष राजनीतिक गतिविधियों के विभिन्न प्रकारों को स्वयं अभिव्यक्त करता है।[9] हार्टगंटन तथा नेल्सन ने स्वीकारा है कि राजनीतिक सहभागिता को सामान्य रूप से व्यक्तिगत नागरिकों द्वारा राजकीय निर्णय प्रक्रियाओं को प्रभावित करने वाली गतिविधियों के रूप में समझी जा सकती है।[10] मैक्गलोस्की के अनुसार राजनीतिक सहभागिता प्रजातन्त्रीय व्यवस्थाओं में सहमति देने अथवा वापस लेने का एक प्रमुख साधनहै जिसके द्वारा शासकों को शासितों के प्रति उत्तरदायी बनाया जाता है। इनके शब्दों में राजनीतिक सहभागिता को उन स्वैच्छिक क्रियाओं, जिनके द्वारा समाज के सदस्य शासकों के चयन एवं प्रत्यक्ष व अप्रत्यक्षरूप से जननीतियों के निर्माण में भाग लेते हैं, के रूप में परिभाषित किया जा सकता है।[11] मैथ्यूज तथा प्रोथो के अनुसार राजनीतिक सहभागिता प्रत्येक व्यवहार जिसके द्वारा लोग अपने राजनीतिक मतों को प्रत्यक्ष रूप से अभिव्यक्त करते हैं।[12] राम आहूजा के शब्दों में राजनीतिक सहभागिताएक ऐसी प्रक्रिया है जिसके द्वारा लोग स्वैच्छिक रूप से राजनीतिक क्रियाकलापों एवं मामलों में हिस्सा लेते हैं– (i) चुनाव में मतदान करना; (ii) राजनीतिक दलों द्वारा आयोजित सभाओं में भाग लेना; (iii) चुनाव प्रचारों में सहभागिता; (iv) चुनाव लड़ना तथा ;अद्ध विजयी होकर राजनीतिक पदों पर आसीन होना। ये पाँच संकेतक हैं जो कि राजनीतिक सहभागिता को प्रदर्शित करते हैं।[13] रश और अल्थाफ[14] ने राजनीतिक गतिविधियों को संस्तरीकृत करके निम्न लिखित रूप से व्यवस्थित किया है : (i) राजनीतिक अथवा प्रशासकीय

पदों को ग्रहण करना; (ii) राजनीतिक अथवा प्रशासकीय पदों के प्रति इच्छा; (iii) राजनीतिक संगठन में सक्रिय सदस्यता; (iv) राजनीतिक संगठनमें निष्क्रिय सदस्यता; (v) अर्ध राजनीतिक संगठन (हित समूह अथवा दबाव समूह) की सक्रिय सदस्यता; (vi) अर्ध राजनीतिक संगठन की निष्क्रिय सदस्यता; (vii) विभिन्न प्रकार के सार्वजनिक सभाओं, प्रदर्शनों एवं अन्य सहभागिता; (viii) अनौपचारिक राजनीतिक वार्तालाप, वादविवाद में सहभागिता; (ix) राजनीति में सामान्य रुचि; (x) मतदान करना; (xi) उदासीनता।

राजनीति सहभागिता में विभिन्न प्रकार की क्रियाएं सम्मिलित की जाती हैं। इन क्रियाओं को राजनीतिक स्तर पर विभिन्न दशाओं एवं कारकों के माध्यम से व्याख्या एवं वर्गीकरण कर सकते हैं। मैक्गूलोस्की[15] ने इसमें मतदान, जानकारी प्राप्त करना, वाद विवाद एवं धर्मान्तरण, सभाओं में उपस्थित होना, चन्दा देना, प्रतिनिधियों के साथ सम्पर्क रखना आदि विशिष्ट क्रियाएं तथा दल की औपचारिक सदस्यता ग्रहण करना, चुनाव अभियान में भाग लेना, राजनीतिक भाषण देना या लिखना तथा सार्वजनिक एवं दलीय पदों के लिए चुनाव में भाग लेना तथा विजयी होकर राजनीतिक पदों पर आसीन होना आदि जैसे अधिक सक्रिय क्रियाओं को सम्मिलित किया है। इसी प्रकार वुर्डवर्ड तथा रोपट[16] ने राजनीतिक सहभागिता की निम्न वर्णित पाँच प्रमुख क्रियाएं बतायी हैं– (1) चुनावों में मत देना; (2) पार्टी का प्रारम्भिक सदस्य बनकर इन्हें समर्थन प्रदान करना; (3) विधायकों से प्रत्यक्ष संचार करना; (4) राजनीतिक दलों की गतिविधियों में भाग लेकर विधायकों पर अधिकार प्राप्त करना; (5) अन्य नागरिकों से मौखिक रूप से राजनीतिक विचारों का आभ्यासिक प्रचार करना। जबकि लेस्टर मिल ब्रार्थ[17] ने सहभागिता से सम्बद्ध राजनीतिक क्रियाओं को तीन श्रेणियों में विभाजित किया है :

(i) असि क्रीड़कीय अर्थात पूर्ण सक्रिय क्रियाएंः असि क्रीड़कीय के अन्तर्गत लोगों में दल के सक्रिय कार्यकत्ताओं को सम्मिलित किया जा सकता है जो दलीय पदों पर नियुक्त दलीय प्रत्याशी के रूप में चुना लड़ने, दल के लिए चन्दा एकत्र करने, दल की सभाओं में जाने तथा दल की सभाओं एवं अभियानों में सम्मिलित होने जैसी सक्रिय क्रियाओं में भाग लेते हैं।

(ii) संक्रमण क्रियाएंः इसके अन्तर्गत दल के समर्थकों, सहानुभूति रखने वालों अथवा केवल तटस्थ–सजग श्रोताओं के रूप में दल की सभाओं में जाने, दल के कोष में चन्दा देने, सरकारी अधिकारियों या दल के नेताओं से सम्पर्क स्थापित करने जैसी क्रियाओं को सम्मिलित किया जाता है।

(iii) दर्शक क्रियाएंः इसके अन्तर्गत मत देने, किसी अन्य को विशेष प्रकार से मत देने के लिए प्रभावित करने, राजनीतिक बातचीत अथवा वाद विवाद में भाग लेने, राजनीतिक

उद्दीपनों द्वारा प्रभावन तथा दलीय बिल्ले लगाने आदि क्रियाओं को सम्मिलित किया जाता है।

उपरोक्त वर्गीकरण यह अभिव्यक्त करता है कि नागरिकों में राजनीतिक सहभागिता एक समान नहीं है तथा निष्क्रियता एवं सक्रियता की मात्रा में सामान्य अन्तर है। उद्देश्य की दृष्टि से राजनीतिक सहभागिता दो प्रकार की हो सकती है।[18] : (1) साधक सहभागिता, तथा (2) अभिव्यंजक सहभागिता। साधक सहभागिता निश्चित लक्ष्यों यथा दल की विजय या विधयेक की स्वीकृति या अपनी स्थिति व प्रभाव में वृद्धि की प्राप्ति से संबंधित है। इसके विपरीत अभिव्यंजक राजनीतिक सहभागिता वास्तविक लक्ष्य प्राप्ति से संबंधित न होकर तत्कालिक संतुष्टि अथवा भावनाओं को मुक्त करने से संबंधित होती है। अतः कुछ लोग मताधिकार का प्रयोग इसलिए नहीं करते कि इससे उनको कोई लाभ नहीं होगा अपितु इसलिए करते हैं कि इससे उन्हें संतुष्टि की अनुभूति होती है। वास्तविक व्यवहार में दोनों प्रकार की सहभागिता को एक दूसरे से पृथक करना अवैज्ञानिक एवं कठिन है।

राजनीतिक सहभागिता के अध्ययन के क्षेत्र में संचार निःसंदेह उपयुक्त क्षेत्र है जो कि अध्ययन में उपयोगी हो सकता है। राजनीतिक सहभागिता के लिए संपर्क के माध्यम से संचार आवश्यक वाहिका या माध्यम हैः विधायकों एवं अफसरशाही प्रकार्यों से लेकर शासन को प्रभावित करने में। यह संपर्क नागरिकों एवं शासकीय अफसरशाही संचार के दो स्तरों को संलग्न कर सकती है। समूहों एवं संगठनों के माध्यम से नागरिक सामान्य जनता से संबंधित सामाजिक एवं राजनीतिक समस्याओं को सुलझाने में कुछ प्रकार के सहभागी प्रयत्नों में शामिल होते हैं।[19] यहाँ पर यह स्पष्ट करना आवश्यक है कि नागरिक विधायकों अथवा सरकारी अफसरशाहों से मुख्य रूप से व्यक्तिगत लाभ के लिए मिलते हैं।[20]

उपरोक्त स्थितियों में संपर्क मुख्य रूप से व्यक्तिगत लाभों के लिए प्रेरक एवं फलदायी होता है जिसमें बिचौलिये मुख्य रूप से प्रभावी होते हैं। इन्हें हम साधक राजनीतिक सहभागिता के रूप में वर्णित कर सकते हैं। ये बिचौलिये वैध या अवैध लाभ अथवा असाधारण रूप से वरीयता दिलाने के विशिष्टीकृत संपर्क के माध्यम से महत्वपूर्ण भूमिका अदा करते हैं। ऐसी घटनाएं विशिष्ट रूप से भारत में देखी जा सकती हैं।[21]

इस व्यवस्था में विधायक और राजनीतिक रूप से सक्रिय कार्यकर्ता निर्णयकर्ता (नौकरशाह अथवा राजनीतिक प्रशासक) और नागरिकों (लाभान्वित होने वालों अथवा अपने पक्ष में चाहने वालों) के बीच सामान्य रूप से मध्यस्थता अथवा बिचौलिए के रूप में कार्य करते हैं। यदि गहराई से अध्ययन किया जाये तो संभवतः ज्ञात होगा कि यह संपर्क चुनाव प्रक्रिया में कितना प्रभावकारी अथवा लाभकारी होता है तथा विशिष्ट प्रत्याशी के पक्ष अथवा विरुद्ध में ये

बिचौलिए अथवा संपर्क के माध्यम से प्रभावकारी लोग मतों के परियोजन में कितनी भूमिका निभाते हैं।

राजनीतिक सहभागिता संबंधी क्रियाओं की सूची में हालांकि कुछ विवादित दो समकालीन महत्वपूर्ण संयोजन किये गये हैं।[22] प्रथमतया, औपचारिक अथवा अवलंब सहभागिता। द्वितीय– प्रतिवाद सहभागिता।

1– औपचारिक या अवलम्ब सहभागिताः इस प्रकार सहभागिता में नागरिक प्रदर्शन अथवा जुलूस, विकासीय परियोजनाओं, और शासकीय रूप से संगठित युवा–समूहों के माध्यम से शासन या सरकार के पक्ष में अपनी सहभागिता अभिव्यक्त करते हैं विकासशील देशों में समर्थित प्रदर्शन में नागरिकों का राजनीतिक परियोजन सामान्य है और विकासशील देशों में यह कोई असामान्य घटना नहीं है।

2– प्रतिवाद सहभागिताः इस प्रकार की सहभागिता प्रदर्शनों अथवा विभिन्न प्रकार के मोर्चों के माध्यम से अभिव्यक्त होता है। वर्तमान समय में इस प्रकार की सहभागिता ने महत्वपूर्ण स्थान प्राप्त कर लिया है। इस प्रकार की गतिविधियों में दंगे, हत्याएं और नागरिक हिंसा के अन्य स्वरूप सम्मिलित हैं जिसके द्वारा नागरिक शासन को दबाव में लाते हैं अथवा अभित्रासित अथवा तर्जित करते हैं। नाई एण्ड वर्बा[23] इस प्रकार की गतिविधियों को अवैधानिक गतिविधियों से बिल्कुल गतिविधियों का राजनीतिक एवं समाज पर अन्य प्रकार का प्रभाव पड़ता है। यह सकारात्मक राजनीतिक परियोजन को प्रभावित करता है। वे जिक्र करते हैं कि इसके प्रयासों से किन्हीं निश्चित दिशा में शासन को अपने पक्ष में लाने, उनके निर्णयों को अपने अनुकूल बनाने अथवा प्रोत्साहित करने के लिए अथवा निर्णय प्रक्रिया को रोकने के लिए होता है।

राजनीतिक सहभागिता को प्रभावित करने वाले कारक : राजनीतिक सहभागिता देश के शासन पद्धति के अनुसार अलग–अलग स्थिति में विभिन्न कारकों से प्रभावित होती है। ''यह जटिल प्रघटना है यह अनेक कारकों द्वारा प्रभावित होती है। एक देश से दूसरे देश, एक युग से दूसरे युग तथा एक ही देश के विभिन्न वर्गों में राजनीतिक सहभागिता एक समान रूप से नहीं पायी जाती। राजनीतिक सहभागिता को प्रभावित करने वाले प्रमुख कारक निम्न हैं।''[24]

1– सामाजिक कारकः राजनीतिक सहभागिता स्वाभाविक लक्षण कम होकर राजनीतिक समाजीकरण का परिणाम हैं ''राजनीतिक समाजीकरण से अभिप्राय सीख की वह प्रक्रिया है जिहसके द्वारा प्रचलित राजनीतिक व्यवस्था द्वारा स्वीकृत राजनीतिक आदर्श एवं व्यवहार पीढ़ी दर पीढ़ी हस्तांरित होते है।''[25] अन्य शब्दों में ''राजनीतिक समाजीकरण वह

तरीका है जिसके द्वारा समाज राजनीतिक संस्कृति को एक पीढ़ी से दूसरी पीढ़ी में हस्तांतरित करता है।[26]

इस प्रकार राजनीतिक समाजीकरण एक प्रक्रिया एवं परिणाम के रूप में व्यक्ति को राजनीतिक दृष्टि से परिपक्व बनाने में सहायक होती है चाहे या किसी भी अभिकरण या अभिकरणों का परिणाम क्यों न हो। इसमें शिक्षा, व्यवसाय, आय, लिंग, आयु, वैवाहिक स्थिति, निवास स्थान, गतिशीलता, धर्म, जाति, प्रजाति तथा सामूहिक प्रभाव जैसे अनेक सामाजिक कारक सहायक हैं। अमेरिका तथा पश्चिमी देशों में हुए अध्ययनों के आधार पर सामाजिक कारकों की राजनीतिक सहभागिता में भूमिका निम्न प्रकार से समझी जा सकती है[27] :

(i) शिक्षाः एक महत्वपूर्ण चर के रूप में राजनीतिक सहभागिता में प्रभावी भूमिका निभाती है। अमेरिका, फिनलैण्ड, मैक्सिको, ब्रिटेन, फ्रांस तथा इटली में हुए अध्ययनों से पता चलता है कि उच्च शिक्षा प्राप्त लोगों में राजनीतिक सहभागिता अधिक पायी जाती है। राजनीति में उच्च शिक्षित लोग निर्णय प्रक्रिया को मुख्य रूप से प्रभावित करते हैं तथा तुलनात्मक रूप से उनको राजनीतिक लोगों में साथ ही साथ समाज में अधिक सम्मान एवं प्रतिष्ठा मिलती है। परन्तु विकासशील देशों में कम शिक्षित लोग भी राजनीतिक रूप से सक्रिय होते हैं तथा जनता में स्थानीय स्तर पर उनको भी सम्मान एवं प्रतिष्ठा मिलती है। कम शिक्षित लोग शरीरिक रूप से राजनीति में अधिक संघर्षशील होते हैं। शिक्षा राजनीति को समझने में तथा निर्णय प्रक्रिया को मजबूत बनाने में अधिक उपयोगी होती है। वी.एम. सिरिसकर[28] ने राजनीति में शिक्षा की भूमिका को अपनी पुस्तक 'सोरनस विथाउट क्राउनस' में विवेचित किया है।

(ii) नगरीयकरण : नगरीय लोगों की अपेक्षा कृषकों अथवा ग्रामवासियों में सक्रियता की संभावना कम होती है (अमेरिका, फिनलैण्ड, ब्रिटेन, नार्वे, डेनमार्क तथा स्वीडन में हुए अध्ययनों से इसकी पुष्टि होती है)। परन्तु भारत में कृशक एवं ग्रामीण भारतीयों में सक्रियता अधिक पायी जाती है।

(iii) सामाजिक अंतर्भावित्ताः श्रमिक संघ के सदस्य गैर–श्रमिक संघ के सदस्यों की अपेक्षा राजनीति में अधिक रुचि लेते हैं, विभिन्न मामलों के बारे में उनका दृष्टिकोण अधिक स्पष्ट एवं मजबूत होता है तथा ये मताधिकार का प्रयोग अधिक करते हैं (अमेरिका, ब्रिटेन व स्वीडन में हुए अध्ययनों से प्रमाणित) और स्वयंसेवी संगठनों में उच्च–सहभागिता राजनीतिक सहभागिता से सह–संबंधित है (अमेरिका, फ्रांस, ब्रिटेन तथा पश्चिमी जर्मनी मे हुए अध्ययनों से प्रमाणित)।

;पअद्ध निवासः किसी समुदाय में व्यक्ति का निवास जितनी अधिक लंबी अवधि के लिए होता है, उतनी ही राजनीतिक सहभागिता (मुख्यतः आसिक्रीड़कीय क्रियाओं के संदर्भ में)

अधिक पायी जाती है (अमेरिका, फिनलैण्ड तथा ब्रिटेन मे हुए अध्ययनों से प्रमाणित)।

(v) आयुः राजनीतिक सहभागिता आयु के साथ–साथ बढ़ती है परन्तु 50–60 वर्ष की आयु के पश्चात् राजनीतिक सहभागिता कम होने लगती है (अमेरिका, ब्रिटेन व फ्रांस में हुए अध्ययनों से प्रमाणित)।

(vi) वैवाहिक स्थितिः सबसे उदासीन समूह अविवाहित नागरिक होता है जो अपने समुदाय में सीमांत रूप से ही संयुक्त है (अमेरिका, फिनलैण्ड, नार्वे तथा ब्रिटेन में हुए अध्ययनों से प्रमाणित) परन्तु विकासशील देश जैसे–भारत में अविवाहित लोग राजनीतिक रूप से अधिक सक्रिय हैं तथा राजनीतिक दलों अथवा समितियों में प्रभावशाली पदों पर आसीन होकर समाज में प्रतिष्ठा अर्जित कर रहे हैं। बच्चों रहित विवाहित लोगों में सहभागिता की दर सबसे अधिक है (अमेरिका में हुए अध्ययनों से उसकी पुष्टि होती है)।

(vii) लिंगः पुरुषों में स्त्रियों की अपेक्षा अधिक राजनीतिक सहभागिता पायी गयी है (अमेरिका, ब्रिटेन, इटली, फ्रांस, जर्मनी, मैक्सिको, स्वीडन, नार्वे तथा जापान में हुए अध्ययनों से इसकी पुष्टि होती है)। भारत में भी आंकड़ों एवं अध्ययनों से पता चलता है कि स्त्रियों में राजनीतिक सहभागिता 8 प्रतिशत से लेकर अधिकतम 14 प्रतिशत तक पायी जाती है।

;अपपपद्ध धर्म प्रजाति एवं संजातीयताः नीग्रो–सफेद लोगों की अपेक्षा, यहूदी कैथोलिक लोगों की अपेक्षा तथा कैथोलिक प्रोटेस्टेंट लोगों की अपेक्षा राजनीति में अधिक भाग लेते हैं (अमेरिका, फ्रांस व बेल्यिजम में हुए अध्ययनों से प्रमाणित)।

2– मनोवैज्ञानिक कारकः व्यक्ति की अकेले न रहकर अन्य लोगों से सहयोग करने एवं सहयोग प्राप्त करने की स्थिति राजनीतिक सहभागिता को प्रेरित करती है। एक जिज्ञासु प्राणी होने के कारण व्यक्ति राजनीतिक सहभागिता द्वारा राजनीतिक पर्यावरण को समझने का प्रयास करता है। यह अचेतन मनोवैज्ञानिक स्थितियों (यथा मानसिक तनाव एवं मंदी की स्थिति) से प्रेरित हो सकती है। राजनीतिक सहभागिता व्यवस्थापन की प्रक्रिया के रूप में भी सहायक होता है तथा उदारीकरण के माध्यम से (मानसिक तनाव को कम करने के लिए) राजनीतिक सहभागिता के प्रति व्यक्ति प्रेरित होता है। राबर्ट लेन[29] ने ब्रिटेन के एक प्रधानमंत्री श्री एण्ड्रू बोनर लॉ का एक ऐसा ही उदाहरण दिया है जो अपनी पत्नी की 1909 में आकस्मिक मृत्यु के पश्चात् अपने मानसिक तनाव को कम करने के लिए सक्रिय राजनीति में आ गये थे। अलमाण्ड एण्ड वर्बा[30] में राजनीतिक सहभागिता के मनोवैज्ञानिक अथवा व्यैक्तिक घटकों पर विशेष रूप से अध्ययन किये हैं।

3– राजनीतिक कारकः राजनीतिक स्थितियां भी राजनीतिक सहभागिता को प्रभावित करती हैं। यदि राजनीतिक संचार के माध्यम नहीं हैं अथवा अपनी भूमिका ठीक प्रकार से नहीं निभा रहे हैं या सरकारी संस्थाएं जटिल व कठोर नियमों से जकड़ी हुई हैं तो राजनीतिक

सहभागिता की संभावना कम होगी। स्वतंत्र दलीय गतिविधियां राजनीतिक विचारों को व्यक्त करने की स्वतंत्रता व माध्यमों की उपलब्धता, राजनीतिक चेतना एवं जागरुकता तथा राजनीतिक प्रभाविता– भावना आदि कारक राजनीतिक सहभागिता को प्रभावित करते हैं। राजनीतिक अलगाव की भावना, प्रतिमानहीनता एवं राजनैतिक उदासीनता राजनीतिक सहभागिता को कम करते हैं।

राजनीतिक सहभागिता को प्रेरित करने वाले कारकों में राजनीतिक प्रभाविता प्रमुख राजनीतिक कारक है। यह नागरिकों के राजनीतिक व्यवहार में महत्वपूर्ण कारक हैं तथा यह राजनीतिक सहभागिता का प्रमुख उद्दीपन है। राजनीतिक प्रभाविता को इस प्रकार से परिभाषित कर सकते हैं कि ''राजनीतिक प्रभाविता– भावना नागरिक की यह अनुभूति है कि व्यक्तिगत राजनीतिक कार्य राजनीतिक प्रक्रिया को प्रभवित करता है या कर सकता है अर्थात् नागरिक कर्तव्यों को निभाना लाभप्रद है। यह एक अनुभूति है कि राजनीतिक एवं सामाजिक परिवर्तन संभव है तथा व्यक्तिगत नागरिक इस परिवर्तन को लाने में भूमिका निभा सकते हैं।[31]

उपरोक्त परिभाषा एवं संप्रत्यय का प्रयोग कैम्पवल एवं सहयोगियों द्वारा किया गया। इनके द्वारा राजनीतिक प्रभाविता– भावना के संप्रत्यय के प्रयोग को ईस्टन एवं डोनसि[32] ने और आगे बढ़ाते हुए इसे स्थायी राजनीतिक व्यवस्था में व्यक्ति की सहभागिता को मूल शासन आदर्श कहा है। इन्होंने इसके तीन तत्वों– आदर्श, स्ववृत्ति तथा व्यक्तित्व वास्तविक आचरण में भेद किया है। एक आदर्श के रूप में राजनीतिक प्रभाविता – भावना से अभिप्राय राजनीति में व्यक्तियों द्वारा प्रभावशाली ढंग से र्का करने की आकांक्षा संबंधी योग्यता है। एक 'स्ववृत्ति' के रूप में इसका अर्थ राजनीतिक क्षेत्र में प्रभावी होने की क्षमता है। जबकि व्यक्ति के 'वास्तविक आचरण' के रूप में इसका अर्थ व्यक्ति का व्यवहार है। इन तीनों तत्वों के परस्पर संबंधों का वर्णन करते हुए इन्होंने यह बताया है कि व्यक्ति प्रभावी रूप से कार्य भी कर सकता है और नहीं भी। परन्तु यदि वह घटनाओं को वास्तव में प्रभावित करता है तथा राजनीतिक नियति के निर्माण करने में भाग लेता है तो उसने राजनीतिक प्रभाविता को प्रेक्षण योग्य (स्पष्ट प्रतीयमान) स्तर पर व्यक्त किया है, भले ही वह अपनी इस प्रभाविता– भावना के बारे में जागरुक नहीं है। ईस्टर एवं डेविस के शब्दों में राजनीतिक प्रभाविता भावना व्यक्ति की शक्ति की प्रत्यक्ष भावना, व्यक्तियों की इच्छाओं के प्रति सरकार की संवेदनशीलता में विश्वास, सरकार की व्यापकता का विचार प्रभाव के पर्याप्त साधनों की उपलब्धता, सरकार की शासक या शासित के प्रतिवश्यता व नियतिवाद का सामान्य विरोध है।

राजनीतिक प्रभाविता– भावना राजनीतिक सहभागिता को प्रोत्साहित करने में साथ ही इसके प्रति उदासीनता दोनों ही स्थितियां इससे संबंधित होती हैं। द्‌यूबॉन[33] ने राजनीतिक

प्रभाविता–भावना में तथा राजनीतिक सहभागिता एवं उदासीनता में संबंध रखने का प्रयास किया है। इसके अनुसार राजनीतिक प्रभावित–भावना व्यक्तित्व का एक सामान्य गुण है तथा इस प्रकार व्यवहारवादी अनुक्रियाओं एवं मनोवैज्ञानिक अभिवृत्तिक प्रक्रियाओं से संबंधित है। परन्तु इस संबंध को आनुभाविक रूप से प्रभावित नहीं किया गया है।

राजनीतिक प्रभाविता–भावना की भी कई श्रेणियाँ हो सकती हैं इसमें व्यक्ति अपनी स्वयं की राजनीतिक क्षमता एवं मत को महत्वपूर्ण समझता है। दूसरी तरफ इस भावना से यह भी समझता है कि वह राष्ट्रीय स्तर पर सरकार को प्रभावित भी कर सकता है। मोथिसन जे. आर. एण्ड पावेल ने प्रभाविता को दो श्रेणियों में विभाजित किया है[34] (अ) मतप्रभाविता (ब) राष्ट्रीय प्रभाविता।

'मत प्रभाविता' से अभिप्राय व्यक्ति का यह विश्वास है कि व्यक्तिगत राजनीतिक मत महत्वपूर्ण है, जबकि 'राष्ट्रीय प्रभाविता' किसी वस्तु एवं स्थिति के संदर्भ में होती है तथा इससे तात्पर्य व्यक्ति का यह विश्वास है कि वह राष्ट्रीय सरकार को प्रभावित कर सकता है। राष्ट्रीय प्रभाविता को भी इन्होंने दो प्रकार बताया है:– (1) प्रत्यक्ष, तथा (2) व्यवहित राजनीतिक प्रभाविता।

'प्रत्यक्ष राजनीतिक प्रभाविता' व्यक्ति की यह अनुभूति है कि वह प्रत्यक्ष रूप से राष्ट्रीय सरकार के निर्णयों को प्रभावित कर सकता है। इस प्रकार की प्रभाविता स्थायी एवं आधुनिक राष्ट्रों (यथा संयुक्त राज्य अमेरिका) का प्रमुख लक्षण है।

'व्यवहित राजनीतिक प्रभाविता' व्यक्ति की यह अनुभूति है कि वह सरकार को प्रभावित कर सकता है क्योंकि उसके कुछ ऐसे मध्यस्थों या दलालों से साधक संबंध है जो स्थानीय एवं राष्ट्रीय राजनीतिक व्यवस्था में प्रभावशाली है (यथा भारतवर्ष)।

भारत में राजनीतिक प्रभाविता भावना के अध्ययन:

राजनीतिक प्रभाविता–भावना राजनीतिक सहभागिता के लिए प्रमुख उद्दीपन का कार्य करता है। राजनीतिक व्यवस्था के प्रति विश्वास, प्रतिबद्धता तथा उन्मुखन काफी सीमा तक नागरिकों की राजनीतिक प्रभावित–भावना पर निर्भर है।

भारत एक प्रजातांत्रिक देश है। प्रजातंत्रीय देश होने के कारण, भारत में भी अनेक समाज वैज्ञानिकों ने राजनीतिक व्यवहार विशेष रूप से मतदान आचारण (जो कि राजनीतिक सहभागिता का प्रथम संकेतक है) को अपने अध्ययनों में इसे एक महत्वपूर्ण चर एवं चरण माना है। इनमें योगेश अटल[35], एस.पी.वर्मा, इकबाल नारायण एवं सहयोगी[36] एम.लाल गोयल[37], बी. सी. मुथैया[38], डी.एल.सेठ[39] तथा एस.के. गुप्ता[40] का नाम उल्लेखनीय है।

उपरोक्त समाज वैज्ञानिकों ने नागरिकों के 'मतदान' प्रवृत्ति का सूक्ष्म रूप से अध्ययन

किया है। नागरिकों का मत व्यवहार यह सूचित करता है कि वह किस प्रकार का शासन पसंद करता है। साथ–साथ राजनीतिक सहभागिता के तरफ अभिमुखन भी मत व्यवहार के परिणामस्वरूप प्रदर्शित होता है। मत व्यवहार के माध्यम से व्यक्तियों के सामने राजनीतिक व्यवस्था के प्रति आस्था अथवा अनास्था भी अभिव्यक्त होता है। व्यक्ति, अपने मत की अनिवार्यता एवं महत्वपूर्णता दोनों तय करके ही किसी व्यक्तिगत प्रत्याशी अथवा दलीय प्रत्याशी के पक्ष अथवा विपक्ष में मतदान करता है।

: संदर्भ :

1. माइकेल, कुर्टिस : कम्पेरेटिव गवर्नमेन्ट एण्ड पालिटिक्स, न्यूयार्क, हार्पर एण्ड को, 1968, पृष्ठ 1।
2. बेवर मैक्स : पोलिटिकल ऐज ऐ वोकेशन, इन एपिजोनो पोलिटिकल सोशियोलाजी, इंगलैण्ड, मैन्युन 1971, पृष्ठ 28।
3. धर्मवीर : राजनीतिक समाजशास्त्र, जयपुर, राजस्थान हिन्दी ग्रंथ एकादमी 1993, पृष्ठ 3।
4. डाउसे, आर.डी. एण्ड जे.ए. ह्यूज : पोलिटिकल सोशियोलाजी, लंदन, जोन विली एण्ड संस, 1975, पृष्ठ 7।
5. जेनेवाबिट्स एम. : पोलिटिकल सोशियोलाजी, इन डेविड रिल्स (सम्पादित) इण्टर नेशनल इनसाइक्लोपेडिया ऑफ द सोशल साइंसेस खंड 12, दि मैकमिलन कंपनी एण्ड डी फ्री प्रेस, 1968, पृष्ठ 208।
6. मुखापाध्याय, ए.के. : पोलिटिकल सोशियोलाजी, कलकत्ता, के.वी. बागची एण्ड कंपनी, 1977, पृष्ठ 11।
7. मिचेल, जी.डी. : पोलिटिकल सोशियोलाजी इन मिचेल (सम्पादित); ए डिकशनरी एव कीगन पाल, 1978, पृष्ठ 133।
8. बविस्कर, बी.एस. : सोशियोलाजी ऑफ पोलिटिकल, इन ए सर्वे ऑफ रिसर्च इन सोशियोलाजी एण्ड एन्थ्रोयोलोजी, खंड ᵖᵖ बंबई, पापुलर प्रकाशन, 1974, पृष्ठ 432।
9. अशरफ एवं शर्मा : पोलिटिकल सोशियोलाजी; ए न्यू ग्रामर ऑफ पालिटिक्स, 1992, पृष्ठ 140।
10. हर्टिंगटन, एस.पी. और नेल्सन जे.एम. : नो इजी. च्वाइस, कैम्ब्रिज, हार्वर्ड यूनिवर्सिटी प्रेस, 1976, पृष्ठ 4।
11. मैक्गूलोस्की, हरवर्ट : पोलिटिकल पार्टीशिपेशन इन डेविड सिल्टा (सम्पादित), वही, वो. 12 पृष्ठ 253–54।

12. मैथ्यूज, डी.आर. एण्ड प्रोयो, जे. डब्लू. : नीग्रोज एण्ड दि न्यू नाउदर्न पालिटिकल्स, न्यूयार्क, हारकोटि, ब्रेस एण्ड वर्ल्ड, 1966, पृष्ठ 57।
13. राम आहूजा : राइट्स ऑफ वीमेन, जयपुर रावत पब्लीकेशन, 1992, पृष्ठ 102।
14. रश, एम. एण्ड एल्माप, पी. : एन इन्ट्रोडक्शन टू पोलिटिकल सोशियोलाजी, लंदन, नेल्सन, 1971।
15. मैक्गूलोस्की : वही, पृष्ठ 253—54।
16. वुर्डवर्ड, जे.एल. एण्डल रोपट : पोलिटिकल ऐक्शंस ऑफ अमेरिकन लिटजन्स इन एच चुल्पाड सैम्युल जे. एण्ड वैल्ड एण्ड मैरिस जैनोविट्स (संपादित) पोलिटिकल बिहेवियर ए रीडर इन थ्योरी एण्ड रिसर्च, न्यू देहली, अमेरिकन पब्लिशिंग कंपनी, 1972, पृष्ठ 133।
17. मिलब्राय लेस्टर : पोलिटिकल पार्टिशिपेशन, शिकागो एण्ड मैकनली, 1965, पृष्ठ 19।
18. धर्मवीर : वही पृष्ठ 151।
19. नाई एण्ड वर्मा, एस.पी. : पोलिटिकल पार्टीशिपेशन इन ग्रीनस्टीन एफः आई. एण्ड पान्सकी एन डब्लू (सम्पादित), हैण्ड बुक ऑफ पोलिटिकल साइंस, वो. 4, मैया चुट्स, रीडशन, बेसेस पब्लीशिंग कं., 1975, पृष्ठ 10।
20. नाई एण्ड वर्मा : वही पृष्ठ 9।
21. वर्मा, नाई एवं डकिस : जायेआन इनार्क मोड्स ऑफ डेमोक्रिटिक पार्टीशिपेशन, ए क्रांस नेशनल कम्परीजन, सेज पब्लीकेशंस, कैलीफोर्निया।
22. अशरफ अली एण्ड शर्मा, एल. एन. : वही।
23. नाई एण्ड वर्बा : वही पृष्ठ 3।
24. धर्मवीर : वही, पृष्ठ 151।
25. सीगल, आर.एस. : एक्जीबिशन एवाउट दि लर्निंग ऑफ पालिटिकल वैल्यूज एनाल्स ऑफ दि अमेरिकन एकेडमी ऑफ सोशल एण्ड पोलिटिकल साइंस, 1965, पृष्ठ 1।
26. लैग्टन, कैमेथ पी. : पोलिटिकल सोशलाइजेशन, न्यूयार्क आर्क्सफोर्ड यूनिवर्सिटी प्रेस, 1969, पृष्ठ 4—5।
27. डाउसे, आर. एण्ड. ह्यूज, जे.ए. : वही पृष्ठ 297—299।
28. सिरिसकट, वी.एम. : सोवरन्स विथाउट क्राउन्स, बाम्बे, पापुलर प्रकाशन, 1973।
29. लेन, राबर्ट, डी. : पोलिटिकल साइंस एण्ड साइकोलाजी, इन एच. कोच (सम्पादित), साइकोलाजी : ए स्टडी ऑफ साइंस न्यूयार्क मैग्रा हिल, वो. 6, 1975।
30. एलमाण्ड एण्ड वर्बा : दि सिविल कलचर, न्यूजर्सी,प्रिंसटन यूनिवर्सिटी प्रेस, 1963।
31. कैम्पबेल, ए. जी. गुटिन एण्ड बास, ई. मिलर : वाटर डिसाइडस इवनास्टर् इलिनायश

पीटर सन, 1974 ।

32. ईस्टन डेविड एण्ड जे. डेनिस : दि चाइल्ड्से एक्विजेशन ऑफ रेजीय नार्म, अमेरिकनल पोलिटिकल साइंस रिव्यू, वो. 61 नं. 1, 1967, पृष्ठ 25—38 ।

33. उपरोक्त ।

34. दयुवान, ई : दि संस ऑफ इफोबिनेरत एण्ड रिस्पांस यू पब्लिक इस्यू, जर्नल ऑफ सोशल इश्यूज, वो. 47, 1959 ।

35. मैक्सिन, जे.आर. एण्ड जे.डी. पखेल : पार्टीशिपेशन एण्ड एफिकेसी, एसपेक्ट्स ऑफ पीजन्ट इनवाल्वमेन्ट इन पोलिटिकल्स मोबिलाइजेशन, कम्परैटिव पोलिटिक्स, अप्रैल, 1972, पृष्ठ 303—329 ।

36. अटल, योगेश : सिटीजन्स सेंस ऑफ पोलिटिकल एफीकेशी, इकोनोमिक एण्ड पोलिटिकल वीकली, 1969 ।

37. वर्मा, एस.पी., इकबाल नारायण : एशेसिएट्स वोटिंग बिहेवियर इन ऐ चोर्जिग सोसाइटी, दिल्ली नेशनल, 1973 ।

38. गोयल, एम. लाल : डिस्ट्रीब्यूशन ऑफ सिविल कम्पीटेंस फीलिंग्स इन इंडिया, सोशियोलाजिकल आबस्ट्रेक्ट्स, वो. 20, 1972 ।

39. मुर्थया, बी.सी. : बिहेवियरल साइंस एण्ड कम्यूनिटी इनवाल्वमेन्ट, वो. 10, 1978 ।

40. सेठ, डी.एल. : आर्गेनाइजेशन आफिलिएशन एण्ड पोलिटिकल बिहेवियर, सोशियोलाजिकल बुलेटिन, वो. 27 नं. 1, 1978 ।

41. गुप्ता, एस.के. : सिटीजन्स इन दि मेकिंग, दिल्ली नेशनल, 1975 ।

जो जैसा सोचता है और करता है, वह वैसा ही बन जाता है।

उन्हें मत सराहो जिन्होंने अनीतिपूर्वक सफलता पायी और संपत्ति कमायी।

राष्ट्रभाषा हिन्दी के अनन्य साधक राष्ट्रकवि मैथिलीशरण गुप्त

डॉ0 विनय कुमार शर्मा
डी0 लिट्0 (शोध छात्र)
हिन्दी विभाग
लखनऊ विश्वविद्यालय, लखनऊ

नीलम शर्मा
शोध छात्रा
हिन्दी विभाग
लखनऊ विश्वविद्यालय, लखनऊ

आधुनिक भारत वाड्.मय में मैथिलीशरण गुप्त का उद्भव एक महान पर्व के समान है। वह राष्ट्रभाषा हिन्दी के साधक थे। अतिशय विनम्र, सरल व हंसमुख प्रकृति के गुप्तजी आचार–विचार, वेश–भूषा आदि से पक्के भारतीय थे। उनकी कविता में भारतीयता की छाप है। वह हमारी जातीय स्मृतियों के सबसे समर्थ कवि हैं। उनकी कविता में मानस जैसी विद्ग्धता, सरलता एवं प्रवाह है। इसीलिए उसका सार्वदेशिक प्रसार है। मैथिलीशरण गुप्त में कालिदास जैसी विशालता, तुलसी जैसी समन्वयकारी दृष्टि, विवेकानंद जैसी निर्भीकता, रवीन्द्र जैसी संगीतात्मकता और प्रेमचन्द्र जैसी यथार्थोन्मुखी आदर्शवादिता है। उन्होंने पराधीन भारत की जड़ता को अपनी ओजस्वी वाणी से तोड़ने का प्रयत्न किया था। यदि रवीन्द्रनाथ ठाकुर विश्वकवि हैं, तो गुप्तजी भारतीय जनता के सच्चे प्रतिनिधि कवि हैं। महात्मा गांधी ने इन्हीं अर्थों में उनकी पचासवीं वर्षगांठ पर उन्हें 'राष्ट्रकवि' की उपाधि से सम्मानित किया था। गुप्तजी जीवनपर्यन्त राष्ट्र की सेवा को समर्पित रहे। दीर्घकालीन अध्यवसाय तथा तपश्चर्या से उपजा उनका समूचा लेखन राष्ट्रीय सांस्कृतिक जन–जागरण का एक ऐसा महाकाव्य है, जिसमें इस महादेश के विस्तृत भू–भाग में बसने वाली जातियों के धर्म, जीवन–दर्शन, पतनोत्थान, आशा और आकांक्षाओं का वीर, श्रृंगार और शांत रसों में विशद विवेचन है। उन्होंने पौराणिक, ऐतिहासिक तथा काल्पनिक चरित्रों के समाख्यान के बहाने भारतीय समाज की अनिवार्यता और व्यक्ति की अस्मिता की खोज की है।

भारत के इतिहास में उन्नीसवीं शताब्दी का समय पुनर्जागरण काल के नाम से प्रसिद्ध है। ब्रिटिश साम्राज्य की स्थापना के बाद राजनीतिक चेतना के साथ प्रबुद्ध भारतीयों में सांस्कृतिक, साहित्यिक एवं धार्मिक भावना का संचार हुआ। शिक्षित वर्ग के कुछ तथाकथित भक्तजनों को मुग्ध करने में पाश्चात्य संस्कृति का आकर्षण एक सीमा तक सफल हो रहा था। मुगल शासन में भारत का सांस्कृतिक ढांचा चरमरा गया था। फलतः बुद्धिजीवी प्रबुद्ध लोगों के समक्ष, अपनी परम्परागत संस्कृति की विरासत को पुनजीर्वित करने का प्रश्न था। सबसे पहले बंगाल में राजा राममोहन राय इस जागरूकता के प्रथम उन्नायक थे, जिन्होंने

भारतीयजनमानस में व्याप्त रूढ़ियों और अंधविश्वासों को ध्वस्त करने का बीड़ा उठाया।

भारतीय संस्कृति के पुनरूत्थान की नूतन प्रक्रिया ने इस युग में जन्म लिया और शनैः शनैः यह चेतना समस्त भारत में व्याप्त हो गई। हिन्दी साहित्य का भारतेन्दु युग, इस पुनर्जागरण के लिए अपने कर्तव्य–निर्वाह में पूरी तरह सजग होकर भागीदारी बना। पराधीन भारत में भी स्वाधीनता की गूंज इसी युग के साहित्यकारों में पूरी तरह ध्वनित हुई। भारतेन्दु युग के कवियों ने पराधीनता के पाश की पीड़ा से छुटकारे की कामना की और ब्रिटिश राज्य की सुख–सुविधाओं के बीच अपने स्वातन्त्रय की कामना में वे मौन तोड़कर मुखरित हो उठे।

पुनर्जागरण का यह स्वर भारतेन्दु युग के साथ समाप्त नहीं हुआ वरन् और अधिक वेग से द्विवेदी युग में गुंजित हुआ। हिन्दी साहित्य के इतिहास में यह युग 1901 से 1920 तक माना जाता है। इस युग को नैतिकतावादी, आदर्शवादी, सुधारवादी आन्दोलन युग कहा जाता है। वस्तुतः नैतिकता या आदर्श का आग्रह मूलतः पुनरुत्थान का ही आग्रह है। अर्थात प्राचीन भारतीय जीवन–मूल्यों को पुनः स्थापित करने की दिशा में साहित्य के माध्यम से जो प्रयत्न द्विवेदी–युग में हुए, उन्हें हम पुनर्जागरण के पूर्वकालिक प्रयत्नों के मेल में ही देख सकते हैं। इस युग में जर्जर रूढ़िवाद के स्थान पर आधुनिक वैज्ञानिक बुद्धिवादी दृष्टिकोण को चिन्तन में स्थान मिला। प्राचीन परम्पराओं को परिष्कृत रूप में स्वीकार किया गया। साहित्य को सीमित गोष्ठी के प्रकोष्ठ से निकालकर व्यापक जन–मंच पर लाया गया। मनोरंजन के स्थान पर लोक शिक्षण के लिए उसका इस्तेमाल प्रारम्भ हुआ।

द्विवेदी युग के कवियों में अपनी सर्वाधिक लोकप्रियता, सहज–सरल भाषा और कथा प्रसंगों की मार्मिकता के कारण मैथिलीशरण गुप्त का नाम शीर्ष पर है। यदि उत्तर भारत के हिन्दी काव्य के नवजागरण का इतिहास लिखा जाएगा तो राष्ट्रकवि गुप्तजी का नाम पहली पंक्ति में, पहले स्थान पर होगा। ऐसा कहा जाता है कि 'भारत–भारती' की रचना की प्रेरणा गुप्तजी को मौलाना हाली के 'मुसद्दस' से मिली थी। हाली का 'मुसद्दस' मुख्यतः मुसलमानों को जागृत करने के उद्देश्य से लिखा गया था। हाली के सम्मुख राष्ट्रीय जागरण की सामूहिक चेतना नहीं थी। जिस शैली से हाली ने मुसलमानों को जगाया था वह निःसन्देह आकर्षक, उत्साहवर्द्धक और उमंग भरने वाली थी। इस सुधारोद्दिष्ट भावना का प्रभाव हाली से गुप्तजी ने ग्रहण किया, लक्ष्य और शैली में इसीलिए बहुत अन्तर है।

सबसे बड़े आश्चर्य की बात यह है कि 'साकेत', 'यशोधरा', 'द्वापर', 'पंचवटी', और 'जयभारत' के प्रकाश में आने के बाद हिन्दी साहित्य जगत में 'भारत–भारती' को लोग भूल गए थे। किन्तु गुप्तजी की जन्मशती के अवसर पर जिस कृति को सर्वाधिक सम्मान और ध्यानकर्षण का सुयोग प्राप्त हो रहा है वह 'भारत–भारती' ही हैं। इसका एक फलितार्थ यह भी

निकाला जा सकता है कि गुप्तजी की राष्ट्रीय चेतना का प्रतिनिधित्व करने वाली रचना 'भारत–भारती' ही है। लोक मानस से स्वाभाविक सम्पृक्ति का श्रेय भी 'भारत–भारती' को दिया जाना चाहिए। आज से लगभग 80 वर्ष पूर्व गुप्तजी ने भारत के विषय में जो सोचा था और जनता को जगाने और स्वाधिकार के प्रति सावधान करने का जो उपक्रम किया था, वह आज भी उतना ही प्रासंगिक और संगत है जितना 1912 में था। गुप्तजी ने महात्मा गांधी के राजनीतिक क्षेत्र में अवतरित होने से पहले स्वातन्त्रय भावना और स्वदेशाभिमान की प्रवृत्ति का परिचय दिया था। 'भारत–भारती' पर महात्मा गांधी की कोई छाप नहीं है। वह तो कवि का युगबोध से प्रेरित एक उद्बोधन सन्देश है जो अपने अतीत के गौरवगान के साथ वर्तमान दुरवस्था का सजीव चित्र प्रस्तुत करता है। अपने देशवासियों के सामने उन महापुरुषों का पुण्य–स्मरण है जो उदात्त और उज्ज्वल चरित्र के अनुकरणीय आदर्श छोड़ गए हैं। बंगदेशीय पुनर्जागरण के पुरस्कर्ताओं के सामने भारतीय संस्कृति और भारत के इतिहास पुरुषों के आदर्श नहीं थे। जर्जर रूढ़ियों को ध्वस्त करने में तो उनकी गहरी रुचि थी किन्तु स्वसंस्कृति का अभिमान उनके पास नहीं था। यह अतीत–गौरव और स्वदेशाभिमान राष्ट्रकवि गुप्तजी की वाणी से ही गुंजित हुआ। उसकी पहली गूंज हमें 'भारत–भारती' में सुनाई देती है। 'भारत–भारती' उत्तर भारत के पुनर्जागरण का स्वर है।

बीसवीं सदी में भारत ने परतंत्रता की वेदना को सहते हुए आक्रोश की मुद्रा में करवट बदली थी। तिलक, गोखले, लाजपतराय, महात्मा गांधी आदि राजनैतिक नेताओं के साथ क्रान्तिकारियों का दल भी देश में आजादी के लिए उठ खड़ा हुआ था। साहित्यिक क्षेत्र में भी स्वतन्त्रता प्राप्ति की लहर, सभी भाषाओं के मूर्धन्य कवियों की रचनाओं में लक्षित होने लगी थी। उर्दू शायर इकबाल, बंगला के कवि रवीन्द्रनाथ, तमिल के कवि सुब्रह्मण्य भारती और हिन्दी के कवि मैथिलीशरण गुप्त इनमें प्रमुख थे। गुप्तजी का क्षेत्र हिन्दी भाषी होने के कारण सबसे विस्तृत था, अतः उनका प्रभाव भी अन्य कवियों की अपेक्षा व्यापक जन–मानस को स्पर्श करने वाला बना। इसके सिवा उन्हें सबसे लम्बे समय तक कवि कर्म में लीन रहने अवसर मिला और स्वाधीन भारत में भी 17 वर्ष तक उन्होंने अपनी वाणी को भारत–जागरण में लगाया। इसीलिए भी राष्ट्रकवि का पद उनके साथ वास्तव में सार्थक हो सका। मैथिलीशरण गुप्त उन कवियों में हैं जिनकी रचनाएं प्राथमिक कक्षाओं से लेकर सर्वोच्च कक्षाओं के पाठ्यक्रम में निर्धारित रहती है। विगत 70 वर्षों से गुप्तजी के काव्य ग्रन्थ निरन्तर पढ़ाए जा रहे है, यह सौभाग्य किसी अन्य रचनाकार को नहीं मिला।

द्विवेदी युग में कविता के क्षेत्र में खड़ी बोली का प्रयोग विपुल मात्रा में प्रारम्भ हुआ किन्तु उस युग में भी कुछ श्रेष्ठ कवि खड़ी बोली के साथ ब्रजभाषा का दामन भी थामे रहे। श्रृंगार, भक्ति और वीर रस के लिए उस युग में भी ब्रजभाषा का ही प्रयोग होता था।

मैथिलीशरण गुप्त ने कविता की विषय–वस्तु का क्षेत्र–विस्तार किया। उन्होंने समाज–सुधार, राजनीतिक चेतना, जातीय पुनरुत्थान, नवजागरण आदि विषयों का चयन किया और कविता की सामाजिक सम्पृक्ति को व्यापक स्तर प्रदान किया। जिन पाठकों को पहले खड़ी बोली कठोर लगती थी, उन्हें गुप्तजी की कविताओं में माधुर्य और लावण्य लक्षित होने लगा। उसी समय से खड़ी बोली अपनी क्षमता का परिचय देने लगी। पंडित श्रीधर पाठक ने गुप्तजी से पहले खड़ी बोली में सफल प्रयोग किये थे किन्तु उनके मन में रची–बसी ब्रजभाषा पूरी तरह छूटी नहीं थी। ब्रज प्रदेश का प्रेम भी उन्हें बरबस ब्रजभाषा की ओर खींच कर ले जाता था। गुप्तजी के साथ ऐसा कोई भाषा संस्कार कविता के लिए नहीं था। बुन्देली उनकी बोली थी, काव्य भाषा नहीं। उनका सीधा सरोकार खड़ी बोली से था और खड़ी बोली को काव्य क्षेत्र में प्रतिष्ठित करने का प्रणपूर्वक निर्वाह उनका ध्येय था। खड़ी बोली को काव्य भाषा का दर्जा दिलाने में पंडित महावीर प्रसाद द्विवेदी की प्रेरणा और मैथिलीशरण गुप्त की काव्य–साधना ही वास्तविक साधन सिद्ध हुए। किसी भाषा को साहित्य जगत में स्थापित करना, उसकी गौरवशाली परम्परा बनाना सरल काम नहीं है। पचास वर्ष के भीतर खड़ी बोली राष्ट्रभाषा का रूप ग्रहण कर भारत के संविधान में स्थान पा सकी। भाषा के इतिहास में यह एक अभूतपूर्व घटना है जिसका बहुत अधिक श्रेय राष्ट्रकवि गुप्त को है।

गुप्तजी की प्रत्येक प्रबन्धात्मक रचना में एक नारी है। उस नारी का वर्णन करते समय गुप्तजी ने कतिपय आदर्शों की स्थापना का ध्यान रखा है। जो आदर्श नारी चरित्रों के साथ प्रस्तुत किये गये हैं, उनमें उस भारतीय नारी की अस्मिता का उन्हें ध्यान रहा है। सीता, उर्मिला, कैकई, कुन्ती, द्रौपदी, हिडिम्बा, यशोधरा, विष्णुप्रिया आदि नारी पात्र अपने किसी न किसी विशिष्ट गुण के कारण काव्य में स्थान पा सके हैं। इन नारी पात्रों की पहली विशेषता तो पति सेवा तथा पति के लिए त्याग और कष्ट सहन करने में लक्षित की जा सकती है। भारतीय हिन्दू गृहस्थी में नारी की भूमिका त्याग और समर्पण में निहित है। यह त्याग परिवार को समेटता है और यह समर्पण पति के साथ पतिव्रत धर्म का पालन सिखाता है। 'यशोधरा' काव्य के प्रथम पृष्ठ पर जो पंक्तियां लिखी हैं वे नारी को अबला के रूप में भले ही प्रकट करें किन्तु नारी के मूल चरित्र को नहीं छोड़ती। अर्थात आंचल में दूध (वात्सल्य) और आंखों में पानी (करुणा) को व्यंजित करने वाले दो सटीक शब्दों का प्रयोग है। नारी का ऐसा रूप कालिदास और भवभूति के काव्य में तो मिलता है किन्तु हिन्दी का कोई कवि ऐसा उदात्त नारी रूप अंकित नहीं कर सका। नारी जीवन की विवशता को इतने स्वल्प शब्दों में किसी अन्य कवि ने समाहार शैली से नहीं लिखा है।

अपनी सुप्रसिद्ध काव्यकृति 'साकेत', 'यशोधरा' और 'विष्णुप्रिया' में गुप्तजी ने नारी–महिमा का स्तवन किया है। 'द्वापर' शीर्षक रचना में पुरुष द्वारा पीड़ित नारी के पक्ष में

अपनी आवाज उठाते हुए उन्होंने नारी के शोषण और उत्पीड़न के लिए पुरुष को जिन शब्दों की फटकार लगाई है, वह नारी सम्मान से प्रेरित गुप्तजी का ओजस्वी स्वर है। सदियों से आत्म–ग्लानि और कुंठा ग्रस्त रहकर नारी ने जो संतापजनित अपमान सहा है, उसका परिहास गुप्तजी ने बड़ी शालीनता किन्तु प्रखरता से किया है। 'यत्र नार्यस्तु पूजयन्ते रमन्ते तत्र देवता' जैसे सुन्दर शब्द केवल स्मृतियों तक सीमित बने रहे थे, गुप्तजी ने उन्हें यथार्थ की कठोर भूमि पर उतारा। यह ठीक है कि गुप्तजी पारिवारिक मर्यादाओं के कवि थे। परिवार की मर्यादा को वह नारी केन्द्रित मानते थे, किन्तु नारी की मर्यादा को नर से निम्न स्तर पर उन्होंने कभी स्वीकार नहीं किया। 'भारत–भारती' में उन्होंने लिखा था : –

ऐसी उपेक्षा नारियों की जब स्वयं हम कर रहे।
अपना किया अपराध उनके शीश पर हैं धर रहे।।

'पंचवटी' काव्य में पुरूष की स्वार्थप्रियता पर गुप्तजी ने गहरा व्यंग्य किया है :

नरकृत शास्त्रों के सब बंधन हैं नारी को ही लेकर।
अपने लिए सभी सुविधाएं पहले ही कर बैठे नर।।

इन सुविधाओं को देखना हो तो उर्मिला, यशोधरा और विष्णुप्रिया के उत्सर्ग में देखा जा सकता है। ये तीनों नारियां वास्तव में एक ही प्रकार की वेदना की तीन स्थितियां है। तीनों विरहजन्य पीड़ा से विगलित होकर करुणा पात्र बनती हैं और पुरुष के प्रति सर्वतोभावेन समर्पित होकर मन में ग्लानि या दया की आकांक्षी नहीं है। इनके उदात्त चरित्र में कहीं दयनीयता नहीं है।

गुप्तजी ने मानव की प्रतिष्ठा जिस रूप में अपनी रचनाओं में की है वह व्यास या चंडीदास से कम नहीं है। निज धर्म मे अटूट आस्था और मानव को सृष्टि का सर्वश्रेष्ठ उपादान स्वीकार करना गुप्तजी के लिए परम कर्तव्य भावना का मूल–मंत्र था। 'जयभारत' में उन्होंने लिखा है : –

जीवन, यशस सम्मान, धन संतान सुख सब मर्म के।
मुझको परन्तु शतांश भी लगते नहीं निज धर्म के।।

सांस्कृतिक जागरण के लिए गुप्तजी ने जिन जीवन मूल्यों को स्वीकार किया, वे केवल परम्परागत प्राचीन न होकर आधुनिक विचारधारा से समन्वित होकर गढ़े गये थे। गुप्तजी के सांस्कृति आदर्श मर्यादावादी जीवन दर्शन के मेल में है, किन्तु उन्हें युगधर्म के साथ कवि ने इस प्रकार समन्वित किया है कि आज के सुधारवादी आंदोलन के साथ सामंजस्य घटित हो जाता है। उनके काव्य में जो नया है उसका मेरुदंड पुराना है और जो पुराना है उस पर नए भावबोध का रंग पूरी तरह चढ़ा हुआ है। सांस्कृतिक पुनरुत्थान के लिए इसी समन्वित जीवन–दृष्टि की अपेक्षा होती है। यह समन्वित दृष्टि उनके पौराणिक पात्रों के चरित्र–चित्रण

में सर्वत्र व्याप्त है। राम का ईश्वरत्व 'साकेत' में मानवीय स्तर पर उन आदर्शों के मेल में है जो मनुष्य को सहज स्वीकार करने योग्य आधुनिक आदर्श है। 'साकेत' के राम भूतल पर विचरने वाले संवेदनशील मानव हैं। इसी प्रकार उनके अन्य प्रमुख पात्र कृष्ण, युधिष्ठिर, अर्जुन, गौतम बुद्ध, चैतन्य महाप्रभु आदि भी मानवीय व्यापारों में पूरी तरह लीन होकर अपने कर्तव्य का निर्वाह करते हैं।

गुप्तजी ने अपने समय में राष्ट्रीयता के जय घोष के साथ साम्प्रदायिक सौहार्द का वातावरण बनाया। साम्प्रदायिक सद्भाव, जिसकी आज बार–बार चर्चा होती है गुप्तजी के काव्यों में पचास वर्ष पहले से ही निर्दिष्ट कवि कर्म के संदर्भ रूप में स्थान पाता रहा था। उनकी 'मातृ–मन्दिर' शीर्षक कविता को आज के सन्दर्भ में पढ़ने पर लगता है कि यह 1986 के वातावरण में लिखी गई है। गुप्तजी की एक अप्रकाशित रचना 'हिन्दू–मुस्लिम' शीर्षक से है, जिसमें साम्प्रदायिक ऐक्य का सुन्दर वर्णन मिलता है। यह रचना देश के एकत्व को, सर्वधर्म समभाव को, राष्ट्रीय गौरव को – सबके लिए समान भाव से प्रस्तुत करती है। गुप्तजी ने अपने जीवनकाल में सभी वर्गों के महापुरुषों का भक्तिभाव से स्तवन किया। गौतम बुद्ध, महावीर, ईसा मसीह, मुहम्मद साहब, गुरु नानक देव पर स्वतन्त्र काव्य–ग्रन्थ लिखे। यह गुप्तजी की अप्रतिम देन है। महापुरुष किसी जाति, धर्म या सम्प्रदाय विशेष के नहीं होते, फिर भी उनके नाम पर सम्प्रदाय और पंथ उठ खड़े होते हैं और कलह–कुत्सा का वातावरण बनता है। इसका गुप्तजी ने पूरी तरह विरोध किया है।

गुप्तजी अपने युग की सीमाओं में बंधकर सम–सामयिकता को ही काव्य का विषय नहीं बनाते थे। युगबोध की सजग दृष्टि उनके पास थी किन्तु भारत के स्वर्णिम अतीत के प्रति भी उनकी आस्था थी। वह अपने वर्तमान के आगे जाने वाले अनागत भविष्य को भी देख रहे थे। कालजयी कवि वही होता है जो तीनों कालों पर समदृष्टि रखकर विकासोन्मुख बना रहता है। अप्रासंगिकता का प्रश्न–चिन्ह उस पर नहीं लगता। वह परम्परा में विश्वास रखत हुआ, स्वस्थ्य परम्परा को आगे बढ़ाता है। राष्ट्रकवि गुप्त इसी कोटि के कवि थे। भारत में उनकी भारती सदैव गुंजित होती रहेगी।

सन्दर्भ :–

1. मैथिलीशरण गुप्त अभिनन्दन ग्रंथ पृष्ठ – 269 ।
2. वही पृष्ठ – 278 ।
3. हिन्दी साहित्य और संवेदना का विकास–रामस्वरूप चतुर्वेदी, पृष्ठ – 81 ।
4. भावोत्कर्ष के कवि – बल्देव, पृष्ठ – 165 ।
5. गुप्त जी का जीवन दर्शन – त्रिलोचन पाण्डेय, पृष्ठ – 88 ।
6. राष्ट्रकवि मैथिलीशरण गुप्त – संपा. – विजय अग्रवाल, पृष्ठ – 25 ।

यात्रा – वृत्तान्त
(छत्तीसगढ़ के विशेष सन्दर्भ में)

–डॉ0 विनोद मोहन मिश्र
असिस्टेंट प्रोफेसर (सीनियर ग्रेड)
सैन्य अध्ययन विभाग
डी0ए0वी0 कालेज, कानपुर

माओवादी घटनाओं के कारण समय–समय पर छत्तीसगढ़ राज्य का बस्तर, नारायनपुर, दंतेवाड़ा जिला हमेशा सुर्खियों में रहा है। मैं विश्वविद्यालय अनुदान आयोग द्वारा प्रायोजित वृहत्त शोध परियोजना के सन्दर्भ में नेपाली माओवादियों एवं छत्तीसगढ़ के जंगलों में सक्रिय माओवादियों के अन्तर्सम्बन्ध के अध्ययन हेतु दिनांक 25.11.2011 से 29.11.2011 तक छत्तीसगढ़ राज्य के कुछ प्रमुख घने जंगल वाले जिलों का दौरा किया। यात्रा के दौरान काकेंर के निकट केशकाल के जंगलों में स्थायी रूप से निवास कर रहे कुछ संभ्रान्त व्यक्तियों से सम्पर्क कर उनका साक्षात्कार लिया। उनके साक्षात्कार से यह तथ्य उभरकर सामने आया कि इस क्षेत्र पर लगभग 40 वर्षों से माओवादियों का राज है माओवादी कभी नहीं चाहते हैं कि आदिवासी कभी विकास की धारा से जुड़ें; हालांकि छत्तीसगढ़ की सरकार, विकास के लिए कटिबद्ध है। एक समय था इन्हीं माओवादियों ने आदिवासियों का मुद्दा उठाते हुए उनसे सहानुभूति अर्जित की और उनके क्षेत्रों में अपनी गहरी पैठ बना ली और अब वही माओवादी आदिवासी क्षेत्रों में विकास पर प्रतिबन्ध लगाये हुए हैं।

अपनी यात्रा के दौरान मैंने तीन मुख्य स्थानों का भ्रमण किया जिसमें पहला स्थान कोटोमसर गुफा था जो कि घने जंगलों में है, जिसके अन्दर जाने के लिए एक सुरंग से गुजरना पड़ता है पहले तो सुरंग और फिर अन्धेरा देखकर थोड़ा भयभीत हुआ मगर मेरे साथ कुछ और लोग तथा फारेस्ट विभाग का एक गाइड भी था। जिसकी वजह से अन्दर जाने के लिए मेरी हिम्मत बढ़ गयी। गुफा के अन्दर लगभग 30 मीटर जाने के बाद वहाँ पर जो दृश्य मैंने देखा वह बिल्कुल आश्चर्य चकित कर देने वाला था। पानी की हल्की बूदें ऊपर कहीं से टपक रही थीं और यह वर्षों से टपक–टपक कर लाइम स्टोन का निर्माण कर चुकी हैं और यह टार्च की रोशनी में बिल्कुल हीरे जैसी चमक रहीं थीं। गुफा से बाहर निकलने के बाद हमने आदिवासी महिलाओं के साथ फोटोग्राफी करवायी और बेर खाने का आनन्द लिया। यहाँ से लगभग 5 किमी. की दूरी पर तीरथगढ़ जलप्रपात था। यहाँ पर हमने एक ग्रामीण आदिवासी

जो कन्धे पर कुल्हाड़ी लेकर चल रहा था उसके साथ भी फोटोग्राफी करवायी। इसके पश्चात् चित्रकोट जल प्रपात देखने गया। जहाँ का दृश्य बिल्कुल कनाडा के नियाग्रा झील जैसा था। स्थानीय लोग इसे इण्डियन नियाग्रा भी कह रहे थे।

यात्रा के दौरान नारायनपुर जाना चाहता था मगर प्रमुख माओवादी नेता किशन जी उर्फ कोटेश्वर राव की पश्चिम बंगाल में पुलिस मुठभेढ़ में हत्या हो जाने की वजह से माओवादियों ने सड़क मार्ग पर पेड़ काटकर गिरा दिया था और रास्ते बन्द कर दिये थे। किशन जी की हत्या के प्रतिरोध में माओवादियों का जगह–जगह पर बन्द का आह्वान था। इसलिए इसके आगे बढ़ना नामुमकिन था, लेकिन किशन जी की हत्या से एक बात और स्पष्ट हो गयी कि चाहे वह पश्चिम बंगाल का माओवादी हो, आन्ध्रप्रदेश का हो, छत्तीसगढ़ का हो, या नेपाल का हो, सभी के तार आपस में जुड़े हुए हैं; क्योंकि लगभग सभी जगहों पर बन्द का आहवान किया गया था।

उपरोक्त तथ्यों से परिलक्षित होता है कि विपुल खनिज भण्डारों एवं अपार वन सम्पदा का धनी यह क्षेत्र भारत के समृद्ध क्षेत्रों में से एक होने के कारण पिछड़ेपन की त्रासदी से मुक्त नहीं हो पाया है। सरकार विकास तो चाहती है लेकिन माओवादी लगातार विकास में अवरोध उत्पन्न करते हैं। आज के समय में कोई भी ठेकेदार बस्तर के जंगलों में सड़क बनाने का काम नहीं लेना चाहता। सड़कों का निर्माण न होने के कारण बस्तर के जंगलों में मौजूद खनिज भण्डारों को बाहर नहीं लाया जा सकता। इसी तरह शहर की बनी चीजों को आदिवासियों तक नहीं पहुँचाया जा सकता।

माओवादियों ने स्कूल भवनों को भी अपना निशाना बनाया। सरकार ने गरीब आदिवासी बच्चों को पढ़ने के लिए जिन स्कूल भवनों का निर्माण कराया और शिक्षकों की भी नियुक्ति की, लेकिन माओवादियों ने उन स्कूल भवनों को बम से उड़ा दिया और कुछ को अपने छिपने का पनाहगाह बना लिया। वे लगातार शिक्षकों को भी धमकाते रहते हैं। जिससे कोई भी शिक्षक इन क्षेत्रों में पढ़ाने के लिए नहीं जाना चाहता है।

मेरा यह मानना है कि जब तक बस्तर के बच्चों को अच्छी शिक्षा नहीं मिलेगी वह मुख्य धारा से नहीं जुड़ सकते। माओवादी आदिवासी बच्चों की शिक्षा को रोककर उनको अन्धेरे कुएँ में ढकेलना चाहते हैं। इस तरह माओवादी बस्तर के विकास को हर तरह से रोकने में लगे हुए हैं। आये दिन बन्द का एलान होने से यहाँ के जनजीवन पर असर पड़ता है। बस्तर के इस नैसर्गिक सम्पदा की धनी आबादी वनांचल को विकास की धारा से जोड़ना है तो माओवादियों का हर हाल में सफाया जरूरी है।

छत्तीसगढ़ की नैसर्गिक सम्पदा का विहंगम दृश्य

छत्तीसगढ़ के सामाजिक कार्यकर्ता विकास दुबे का साक्षात्कार करते हुए डॉ. विनोद मोहन मिश्र

छत्तीसगढ़ के कोटेमसर गुफा में डॉ. विनोद मोहन मिश्र

छत्तीसगढ़ के आदिवासियों के साथ डॉ. मिश्र

छत्तीसगढ़ में कोटेमसर गुफा के प्रारम्भिक द्वार पर डॉ. मिश्र

डॉ. विनोद मोहन मिश्र डॉ. गिरीश कान्त पाण्डेय के साथ

डॉ. विनोद मोहन मिश्र तीरथगढ़ जलप्रपात के पास

पर्यावरण अध्ययन व प्रबन्धन में जी0आई0एस0 की महती भूमिका

—डॉ0 आरती विश्नोई
वरिष्ठ प्रवक्ता
भूगोल विभाग
पी0पी0एन0 कालेज, कानपुर

पर्यावरण की व्यापकता सर्वज्ञात है। पर्यावरण की गुणवत्ता, पर्यावरण प्रदूषण, संसाधन क्षरण आदि विषयों का विस्तार का प्रयोग स्थानीय नही वरन् महाद्वीपीय होता है फ्रेंच भाषा के Environer से बना Environment पर्यावरण प्राचीन और नवीन दोनों है। इसका विकास 20वीं सदी के प्रथम चरण में, जबकि इसका प्रयोग ईसा पूर्व ग्रन्थो में मिलता है। इसकी वास्तविक शुरूआत मानव भूगोल की शाखा से है।

प्रकृति पूजा का अर्थ प्रकृति की महत्ता को स्वीकार करते हुये जीव व मानव कल्याण की कामना करना था प्रकृति के संसाधनों का उपयोग करने का मनुष्य का पूरा अधिकार है। जनसंख्या का जितना ही अधिकार भार पर्यावरण पर पड़ेगा उतना ही पर्यावरण विकृत होकर जीवजगत के अस्तित्व को समाप्त करने की दिशा में प्रभावी होता रहेगा। इस दिशा में अनियोजित विकास आग में घी का काम करता रहेगा। परिणामस्वरूप प्राकृतिक पर्यावरण के सभी अवयवों पर दवाब पड़ेगा और मानव की मूलभूत आवश्यकताओं में अति आवश्यकतत्व जीवनयुक्त जल और प्राणवायु हर स्थिति में प्रभावित होगा अर्थात प्रदूषित और विलुप्त भी हो सकते है। यह तय है कि कोई राष्ट्र विकास की दिशा में बढ़ेगा तो निश्चित ही वह प्रत्यक्ष/अप्रत्यक्ष रूप से (मानव अस्तित्व, गुणवत्ता एवं पर्यावरण की दृष्टि से) ह्रास की दिशा में जायेगा। जब तक कि उसका विकास सुनियोजित और संतुलित नहीं होगा। प्रदूषण, प्राकृतिक व मानवकृत आपदाये, विश्व जलवायु, परिवर्तन, पेयजल संकट, भूक्षरण जैवविविधता का ह्रास आदि अनेक विश्वस्तरीय व स्थानीय समस्याओं के कारण सम्पूर्ण विश्व के वैज्ञानिकों, पर्यावरण प्रेमियों तथा नियोजनकर्ताओं का ध्यान आकर्षित हुआ, क्योंकि नियोजन विकास की प्रक्रिया होती है।

पर्यावरण प्रबन्ध से तात्पर्य पर्यावरण के विभिन्न घटकों के संरक्षण, संवर्धन, उपयोग एवं उपलब्धता से सम्बन्धित प्रयासों एवं उपायों से है। वैज्ञानिक व विवेकपूर्ण तरीको से प्राकृतिक संसाधनों की गुणवत्ता तथा निरन्तरता बनायें रखते हुये तथा प्रकृति को हानि पहुंचाये बिना मानव के विकास के विभिन्न लक्ष्यों को प्राप्त करना ही पर्यावरण प्रबन्ध है। यह

मनुष्य एवं पर्यावरण के बीच सम्बन्धों को सुधारने की प्रक्रिया है ताकि पर्यावरण एवं समाज दोनों की गुणवत्ता में सुधार हो सके।

पर्यावरण अध्ययन और प्रबन्धन की आधुनिक तकनीकी में भौगोलिक सूचना तंत्र भी एक महत्वपूर्ण पक्ष के रूप में उपस्थित हुआ है। संसार के विभिन्न भागों में अत्युच्चय तकनीक के प्रयोग से पर्यावरण का उपयोग अनेक स्तरो पर किया जा रहा है। वह एक अनवरत प्रक्रिया है तथा सतत गतिशील है सामान्य मानचित्रण (फोटोग्राफ, धरातल पत्रक आदि का प्रयोग पर्यावरण की सतत परिवर्तनशील स्थिति की जानकारी देने में सक्षम नहीं रह गया है। भौगोलिक सूचना तंत्र धरातलीय वास्तविकताओं से सम्बन्धित विविध प्रकार की सूचनाओं के संग्रह, भण्डारण, विश्लेषण और मानचित्रण की तकनीक है। इसके माध्यम से किसी भी धरातलीय क्षेत्र के किसी भी तथ्य के सम्बन्ध में जानकारी प्राप्त की जा सकती है। इस प्रक्रिया में इलेक्ट्रानिक साधनों से सूचना तंत्र अधिक विकसित हो गया है। इसके लिये दूरस्थ संवेदन, हवाई छविचित्र और विश्वसनीय अभिलेखों से आंकड़े प्राप्त किये जाते है स्पष्ट है भौगोलिक सूचना तंत्र स्थानिक आंकड़ों का संग्रह, भण्डारण विश्लेषण एवं प्रस्तुतीकरण का कम्प्यूटर आधारित तंत्र है। चूंकि संग्रहीत आंकड़े आवश्यकतानुसार कम्प्यूटर की मदद से मानचित्रों में बदल दिये जाते है। जैसे बाढ़ग्रस्त क्षेत्र में बाढ़ नियंत्रण परियोजना है।

भौगोलिक सूचना तंत्र में पारिस्थितिकीय तंत्र की संवेदनशीलता तथा मानवीय क्रियाओं के पर्यावरणीय प्रभाव के आधार पर भूतल को मानचित्रित किया जाता है। मृदा, वनस्पति, जलवायु और उच्चारण में सम्मिलित आंकड़ो के विश्लेषण के द्वारा सम्बन्धित घटकों के आधार पर प्रबन्धन किया जाता है। भौगोलिक सूचना तंत्र में संवेदनशील क्षेत्रों के पर्यावरणीय प्रभाव के आकलन द्वारा जल, वनस्पति एवं मिट्टी जैसे घटको की संरक्षण व्यवस्था जहां है जैसा है न्यूनतम स्तर से परिपूरकता एवं अभिवृद्धि का प्रयास संसाधन संरक्षण करना एवं नियोजन की भावना अन्तनिर्हित है।

पर्यावरण की जीवनदायिनी शक्ति का आभास मनुष्य को पर्यावरण प्रबन्धन की प्रेरणा देता है एवं जो आई.एस. की भूमिका उसे पर्यावरण की परिवर्तनीय पार्श्विका के अवलोकन का अवसर प्रदान करती है। यह तकनीक पर्यावरणीय चेतना का अग्रदूत है यह संदेश जनमानस में प्रचारित एवं स्थापित होना चाहिये। संसार के विभिन्न भागों में उत्युच्चय तकनीक के प्रयोग से पर्यावरण का उपयोग अनेक स्तरों पर किया जा रहा है। यह एक अनवरत प्रक्रिया है तथा सतत गतिशील है। सामान्य मानचित्रण का प्रयोग पर्यावरण की सतत परिवर्तनशील स्थिति की जानकारी देने में सक्षम नहीं रह गया है। विकसित देश आधुनिक तकनीकों द्वारा अपने देश के संसाधनों और पर्यावरणीय समस्याओं के आकलन में सक्षम है किन्तु विकासशील और कम विकसित देश न तो अपने संसाधनों का मूल्यांकन कर पा रहे है और न तो अपने संसाधनों

के उपयोग और संरक्षण में संतुलन स्थापित करने में सफल हो पा रहे है। ऐसी दशा में संसाधनों के मूल्यांकन, संरक्षण और सतत विकास को ध्यान में रखकर भूदृश्य परिस्थितिकीय जोखिम सूचना तंत्र का विकास किया गया है। इस पद्धति में देशज ज्ञान का आधारित संसाधन प्रबन्धन एवं पर्यावरण संरक्षण की परिकल्पना की गई है।

संसाधन उपयोग आधारित एवं पारिस्थितिकीय तंत्र की पुर्नउत्पादन क्षमता इस परिकल्पना का आधार है। लेरिस मॉडल एक भूपारिस्थितिक नियोजन पद्धति है जो सर्वेक्षण, प्रबन्धन एवं मानवीय गतिविधिजन्य जोखिम की संभाव्यता की जांच के लिये नामाबिया (अफ्रीका) में विकसित की गई है। इसमें आंकड़ो का संकलन, आंकड़ों का विश्लेषण एवं आंकलन के आधार पर प्रादेशीकरण की क्षमता भी निहित है। इसमें आंकड़ो/सूचनाओं का विश्लेषण क्षेत्रीय इकाइयों के संदर्भ में किया जाता है जो परिवर्तनशील, सतत गतिमान एवं तीव्र परिवर्तनों को आत्मसात कर लेता है। इस मॉडल की प्रक्रिया में परिस्थितिकीय तंत्र की संवेदनशीलता तथा मानवीय क्रियाओं के पर्यावरणीय प्रभाव के आधार पर भूतल को मानचित्रित किया है। प्रमुख चार घटकों मृदा, वनस्पति, जलवायु और उच्चावच में सम्मिलित आंकड़ो के विश्लेषण के द्वारा सम्बन्धित घटकों के अर्न्तसम्बन्धों के आधार पर संवेदनशील क्षेत्रों की पहचान की जाती है तथा संवेदनशील घटकों का उपचार किया जाता है।

इस तकनीक के द्वारा पर्यावरणीय प्रभाव के आंकलन द्वारा जल, वनस्पति एवं मिट्टी जैसे घटकों की संरक्षण व्यवस्था तथा जहां है जैसा है के न्यूनतम स्तर से परिपूरकता एवं अभिवृद्धि का प्रयास होता है। और पर्यावरण प्रभाव के जोखिम की व्याख्या में सहायक होता है यह पर्यावरण की गुणवत्ता की मानिटरिंग, सभी परिस्थितिकीय परिवर्तन एवं पर्यावरणीय एवं परिस्थितिक रूपों पर मानवीय प्रभाव का आलेखन करता है।

अतएव जी.आई.एस. की भूमिका पर्यावरण परिवेश के सतत ज्ञानवर्धन में प्रभावी भूमिका का निर्वाह करती है जिससे पर्यावरण एक वसीयत के रूप में पीढ़ी दर पीढ़ी अपनी गुणात्मक अभिवृद्धि करता रहे।

References -

1. Mishra, D.K., जनसंख्या, पर्यावरण ह्रास एक अनियोजित विकास एक समस्या Uttar Pradesh Geographical Journal V.11.2006 PP - 19
2. V.K. Srivastava जैव जगत का स्थापित्व एवं संवेदनात्मक मानचित्रण Uttar Bharat, Bhoogol Patrika, Vol. 40 No. 1 & 2 2004 PP 1-2
3. Rao and Srivastava, Environmental Management & Eco-development, Environment & Ecology, Vasundhara Publication 2006, PP 514-515
4. Yadav S.V. & Rama Prasad: Agriculture Ecology and Environment Planning Radha Publication New Delhi 2007 PP 138-139.

संयुक्त राष्ट्र संघ में स्थाई सदस्यता के लिए भारत की दावेदारी

–डॉ0 निखिल कुमार सिंह
रीडर, रक्षा अध्ययन विभाग
श्री मुरली मनोहर टाउन स्नातकोत्तर
महाविद्यालय, बलिया (उ0 प्र0)

संयुक्त राष्ट्र की स्थापना ऐसे समय में हुई जब द्वितीय महायुद्ध अपने भीषणतम रूप में सारे संसार को अतंकित कर रहा था। जर्मनी, इटली तथा जापान के धुरी–राष्ट्रों की सम्मिलित शक्ति का सामना करने में अमेरिका, ब्रिटेन तथा अन्य मित्र राष्ट्रों की सारी शक्ति लगी हुई थी। वस्तुतः धुरी–राष्ट्रों की सर्व सत्तावादी प्रवृत्तियां आधुनिक व्यक्ति और राज्य के आदर्श स्वरूप मूल्यों, स्वतंत्रता, समानता अथवा विधि के शासन के रूप में जनतांत्रिक शासन–प्रणाली को भारी नुकसान पहँचा रहीं थी। इसे मानव समाज के आचरण की विडम्बना ही कहा जायेगा कि युद्ध एवं शांति, विध्वंस एवं निर्माण के बीज साथ–साथ निहित होते हैं। नेपोलियनाई युद्धों के बाद 'होली एलायंस, प्रथम विश्वयुद्ध के बाद संयुक्त राष्ट्र संघ (लीग ऑफ नेशन्स) इसके प्रमाण है। द्वितीय विश्वयुद्ध के बाद संयुक्त राष्ट्र संघ की स्थापना में अमेरिकी राष्ट्रपति रूजवेल्ट की भूमिका वैसी ही महत्वपूर्ण थी, जैसी कि प्रथम विश्वयुद्ध के बाद राष्ट्र संघ की स्थापना में अमेरिका राष्ट्रपति विल्सन की भूमिका थी।

परन्तु इस बार अमेरिका पहले की तरह अमेरिका कांग्रेस की असहमति के कारण इस विश्व–संगठन की सदस्यता से वंचित नहीं रहा, अपितु रूस, फ्रांस, ब्रिटेन और राष्ट्रवादी चीन के साथ निषेधाधिकार सम्पन्न स्थाई सदस्य बना।

ध्यातव्य है कि अमेरिका के सैनफ्रांसिस्को नगर में 1 जनवरी, 1942 को ब्रिटेन, रूस, चीन तथा अन्य 26 मित्र राष्ट्रों के प्रतिनिधियों का एक सम्मेलन हुआ। जिसमें यह निर्णय हुआ कि यह राष्ट्र सम्मिलित होकर धुरी–राष्ट्रों का सामना करेंगे। इस संगठन को संयुक्त राष्ट्र या (यूनाइटेड नेशन्स) का नाम अमेरिका के तत्कालीन राष्ट्रपति फ्रैकालिन डी0 रूजवेल्ट ने दिया। 1 जून 1945 को आगे चलकर सैनफ्रांसिस्को में जब संयुक्त राष्ट्रों का सम्मेलन हुआ तो इसके सदस्यों की संख्या 50 हो गई। इसी सम्मेलन में 'संयुक्त राष्ट्र के घोषणापत्र को अन्तिम रूप दिया गया, तथापि संयुक्त राष्ट्र संगठन की विधिवत स्थापना 24 अक्टूबर 1945 को हुई और इसका मुख्यालय न्यूयार्क स्थित मैनहट्टन में बनाया गया।[1]

संयुक्त राष्ट्र संघ के विधान (चार्टर) में इस संगठन की स्थापना का उद्देश्य घोषित करते हुए– आगे आने वाली पीढ़ियों को युद्ध की विभीषिका से बचाने, मानवाधिकारों की पुनः स्थापना और न्यायपूर्ण व्यवस्था का निर्माण करना बताया गया है, इस दृष्टि से–

1. सामूहिक व्यवस्था द्वारा अन्तर्राष्ट्रीय शांति और सुरक्षा कायम रखना और आक्रामक प्रवृत्तियों को नियंत्रण में रखना।
2. अन्तर्राष्ट्रीय विवादों का शान्तिपूर्ण समाधान करना।
3. राष्ट्रों के आत्मनिर्णय और उपनिवेशवाद के विघटन की प्रक्रिया को गति देना।
4. सामाजिक, आर्थिक, सांस्कृतिक एवं मानवीय क्षेत्रों में अन्तर्राष्ट्रीय सहयोग को प्रोत्साहित एवं पुष्ट करना, महत्वपूर्ण माना गया।

संघ के उक्त उद्देश्यों से जुड़े हुए दो और लक्ष्य निर्धारित किये हैं–[2] निरस्त्रीकरण और नई अन्तर्राष्ट्रीय आर्थिक व्यवस्था की स्थापना।

उक्त वैश्विक एवं मानववादी उद्देश्यों के साथ ही संघ के विधान (चार्टर) की धारा–2 में निम्नलिखित मौलिक सिद्धान्तों को स्थान दिया गया है–

1. संयुक्त राष्ट्र संघ का प्रधान आधार, छोटे हो या बड़े, सभी देशों की समानता और सर्वोच्च सत्ता का सिद्धान्त है। यही कारण है कि इस संगठन में प्रतिनिधि भेजने, सभी कार्यवाहियों में भाग लेने के बराबर अधिकार है।
2. सब सदस्यों से यह आशा रखी जाती है कि वे चार्टर द्वारा उन पर लागू होने वाले दायित्वों का पालन पूरी ईमानदारी से करेंगे।
3. सभी सदस्य अन्तर्राष्ट्रीय विवादों का निपटारा शांतिपूर्ण साधनों से करेंगे।
4. सभी राष्ट्र संयुक्त राष्ट्र संघ के उद्देश्यों के प्रतिकूल कोई कार्य नहीं करेंगे। वे किसी देश की स्वतंत्रता का हनन करने की अथवा आक्रमण करने की ना तो धमकी देंगे और ना ही ऐसा कार्य करेंगे।
5. कोई भी देश चार्टर के प्रतिकूल काम करने वाले देश की सहायता नहीं करेगा।
6. संयुक्त राष्ट्र संघ किसी देश के घरेलू मामलों में हस्तक्षेप नहीं करेगा।
7. संयुक्त राष्ट्र संघ अपना सदस्य न बनने वाले राज्यों से भी अन्तर्राष्ट्रीय शांति और सुरक्षा बनायें रखने वाले सिद्धान्तों का पालन सुनिश्चित करेगा क्योंकि अन्तर्राष्ट्रीय शांति और सुरक्षा किसी देश का निजी मामला ना होकर सार्वभौमिक और वैश्विक मामला है।[3]

24 अक्टूबर 1945 में जब संयुक्त राष्ट्र संघ का गठन किया गया था, तब महायुद्ध में प्रभावी भूमिका और भू–सामरिक स्थितियों को देखते हुए पांच देशों को सुरक्षा परिषद की स्थाई सदस्यता दी गयी थी तथा दस देशों की अस्थाई सदस्यता का प्रविधान रखा गया था। 65 वर्षों के बाद अब, जबकि विश्व परिदृश्य में पर्याप्त बदलाव आ चुका है, नई परिस्थितियों और चुनौतियों के अनुरूप सुरक्षा परिषद का पुनर्गठन आवश्यक माना जा रहा है। वस्तुतः पिछले दशक में सोवियत संघ के विघटन के पश्चात अमेरिका के नेतृत्व में राजनीतिक–सैनिक रूप से बने एक ध्रुवीय विश्व में विचारधारा का द्वन्द्व शिथिल पड़ गया है, किन्तु दूसरी ओर आर्थिक भू–मण्डलीकरण, अन्तर्राष्ट्रीय आतंकवाद की प्रवृत्तियों के साथ एफ्रो–एशियाई और लैटिन अमेरिकी देशों की अन्तर्राष्ट्रीय भूमिका एवं महत्व में वृद्धि हुई है,

वहीं पर्यावरण प्रदूषण, मानवाधिकार से संबंधित चुनौतियों तथा पारम्परिक शस्त्रास्त्रों के साथ परमाणुविक हथियारों का भी मात्रात्मक और गुणात्मक विस्तार ने सुरक्षा परिषद के महत्व और दायित्वों में जटिलता के साथ गुणात्मक वृद्धि की है। इन्हीं सब कारणें से संयुक्त राष्ट्र संघ की लोकतांत्रिकता और गतिशीलता के मद्दे नजर सुरक्षा परिषद का पुनर्गठन करके उसके स्वरूप, अधिकार और दायित्व को विस्तृत एवं बहुआयामी बनाने की आवश्कता है।[4] इसी परिप्रेक्ष्य में संयुक्त राष्ट्र महासचिव कोफी अन्नान ने दो अलग–अलग विकल्पों वाली सुधार योजना का प्रारूप 21 मार्च 2005 को महासभा में प्रस्तुत किया। उल्लेखनीय है कि सुधार प्रस्तावों के लिए महासचिव ने थाईलैण्ड के पूर्व प्रधानमंत्री आनन्द पान्याराचुन की अध्यक्षता में एक 16 सदस्यीय ''ब्लू रिबन'' अन्तर्राष्ट्रीय समिति का गठन सितम्बर 2003 में किया गया। जिसमें भारत के सेवानिवृत्त लेफ्टिनेन्ट जनरल सतीश नांबियार भी शामिल थे।

21 मार्च, 2005 को महासभा में प्रस्तुत 62 पृष्ठों के सुधार प्रस्तावों में सुरक्षा परिषद से संबंधित दो प्रारूप वैकल्पिक रूप से सामने आये और दोनों में ही सुरक्षा परिषद की कुल सदस्य संख्या 24 करने तथा किसी भी नये सदस्य को वीटों का अधिकार ना देने की बात कही गई। प्रसंगवश यहां उल्लेखनीय है कि संयुक्त राष्ट्र चार्टर के अध्याय 5 में अनुच्छेद 23–32 तक सुरक्षा परिषद से संबंधित प्रावधानों का वर्णन है। पुनः मूल चार्टर में 5 स्थाई और 6 अस्थाई सदस्यों का प्राविधान किया गया था,[5] किन्तु 1965 में संशोधन करके अस्थाई सदस्यों की संख्या 6 से बढ़कर 10 कर दी गई, जिसमें 5 अफ्रीका और एशिया से 2 लैटिन अमेरिका और कैरेबियाई क्षेत्र से एक पूर्वी यूरोप से तथा 2 पश्चिमी यूरोप से एवं अन्य देशों से दो वर्षों के लिए चुने जाने का प्रावधान रखा गया और यही व्यवस्था वर्तमान तक निरन्तर है। यहां स्मरणीय है कि संयुक्त राष्ट्र संघ की सदस्य संख्या यदि उसके स्थापना वर्ष (1945) में 51 थी, तो 1965 तक 113 हो गई और वर्तमान में 191 देश इसके सदस्य हैं, अर्थात सदस्यों की नियमित वृद्धि और विस्तार को देखते हुए सुरक्षा परिषद में राष्ट्रों का प्रतिनिधित्व स्थैतिक ओर सीमित रहा है।

सुरक्षा परिषद के विस्तार प्रस्तावों से संबंधित प्रथम प्रारूप के अनुसार पूर्व 15 सदस्यों के अतिरिक्त 9 नये स्थाई सदस्यों के परिषद में प्रवेश का प्रस्ताव है, जिसमें 6 स्थाई और 3 अस्थाई प्रस्थिति होंगे, इन स्थाई सदस्यों में दो एशिया, दो अफ्रीका से, एक यूरोप से और एक अमेरिका महाद्वीपों से रखने की सिफारिश है।

<u>इस प्रकार प्रारूप–1</u>

1. पांच वीटों शक्ति युक्त स्थाई सदस्य।
2. छह वीटों शक्ति रहित स्थाई सदस्य।
3. तेरह दो वर्ष की सदस्यता वाले अस्थाई सदस्य।

विस्तार संबंधी दूसरे प्रारूप में भी नौ नये सदस्यों के परिषद में प्रवेश का प्रस्ताव है, किन्तु इन नव प्रवेशी सदस्यों को पहले के दस अस्थाई सदस्यों के साथ रहने की सिफारिश है, अर्थात किसी को भी स्थाई सदस्यता न देते हुए कुल 19 अस्थाई सदस्यों को दो वर्गों में बांटने की सिफारिश है। पहले वर्ग में चार वर्ष के कार्यकाल वाले आठ सदस्य, किन्तु इनकी

सदस्यता नवीनीकृत की जा सकती है। अर्थात ये लगातार पुनिर्वाचन के पात्र है, जबकि दूसरे वर्ग में 11 अस्थाई सदस्य दो वर्ष के लिए चुने जायेंगे और इनकी सदस्यता का नवीनीकरण संभव नहीं होगा।

इस प्रकार प्रारूप–2

1. पांच वीटों शक्ति युक्त स्थाई सदस्य।
2. आठ चार वर्ष के कार्यकाल वाले किन्तु नवीनीकरण के पात्र अस्थाई सदस्य।
3. ग्यारह दो वर्ष के कार्यकाल वाले अस्थाई सदस्य।

भारत का पक्ष और समूह–4 (**G-4**) का प्रस्ताव :–

संयुक्त राष्ट्र संघ महासभा के 58वें अधिवेशन में भारतीय शिष्ट मण्डल का नेतृत्व प्रधानमंत्री ने किया। अपने भाषण में प्रधानमंत्री अन्य बातों के अलावा संयुक्त राष्ट्र संघ की पुनर्संरचना और सुधार की आवश्यकता पर बल देते हुए अन्तर्राष्ट्रीय समुदाय की सामूहिक इच्छा का बेहतर प्रतिनिधित्व सुनिश्चित करने के लिए सुरक्षा परिषद द्वारा उपयुक्त निर्णय निर्माण तंत्र बनाये जाने की जरूरत पर जोर दिया। साथ ही प्रधानमंत्री ने संयुक्त राष्ट्र संघ की प्रक्रियाओं और संस्थाओं के तत्काल सुधार की संयुक्त राष्ट्र संघ महासचिव की अपील का समर्थन किया। ध्यातव्य है कि भारत, ब्राजील, जर्मनी और जापान के साथ मिलकर सुरक्षा परिषद की स्थाई सदस्यता की सामूहिक दावेदारी के लिए समूह–4 का गठन किया और प्रतिबद्धता व्यक्त की कि चारों देश एक दूसरे का नैतिक रूप से समर्थन करेंगे। उल्लेखनीय है कि सुरक्षा परिशद में स्थाई सदस्यता के लिए भारत की प्रबल दावेदारी के लिए निम्नलिखित सुसंगत आधार प्रस्तुत किये जाते हैं–

1. एक अरब से अधिक जनसंख्या वाला भारत चीन के बाद सबसे अधिक जनसंख्या वाला राष्ट्र है। दूसरे शब्दों में विश्व जनसंख्या का प्रायः 1/6 हिस्सा भारत में निवास करता है।
2. भारत विश्व का सबसे बड़ा लोकतांत्रिक देश है, अर्थात् भारत में मतदाताओं की संख्या सर्वाधिक है। पुनः यहां लोकतंत्र स्थाई और प्रगतिशील रहा है। अतः संख्यात्मक और लोकतांत्रिकता दोनों ही आधारों पर संयुक्त राष्ट्र जैसे जनप्रतिनिधित्व वाले संगठन की सुरक्षा परिषद में जन संकुल भारत की स्थाई सदस्यता की दावेदारी स्वाभाविक है।
3. भारत संयुक्त राष्ट्र संघ का संस्थापक और जिम्मेदार सदस्य रहा है। छह बार सुरक्षा परिषद का स्थाई सदस्य चुना गया और समय–समय पर संयुक्त राष्ट्र शांति सेना में सक्रिय भूमिका निभाता रहा है। पुनः संयुक्त राष्ट्र संघ के अन्य अभिकरणों में भी भारत अपनी सार्थकता रेखांकित करता रहा है।[6]
4. भारत अपार आर्थिक संभावनाओं वाला तथा औद्योगिक एवं तकनीकी दृष्टि से सुदृढ़ राष्ट्र है। पुनः संचार और सुदूर संवेदन तकनीकी के क्षेत्र में भारत विश्व में अग्रणी भूमिका का निर्वाह कर रहा है। ये तथ्य भारत के भौतिक संसाधनों

एवं तकनीकी संपन्न मानव संसाधन की क्षमता को रेखांकित करते हैं।

5. भारत जिम्मेदार परमाणुशक्ति संपन्न देश होते हुए भी पूर्ण निःशस्त्रीकरण और परमाणु शक्ति के शांतिपूर्ण उपयोग का सदैव समर्थक रहा है।

6. भारत जनसंख्या नियंत्रण, गरीबी उन्मूलन के साथ–साथ पर्यावरण प्रदूषण और आतंकवाद जैसी विश्व की प्रमुख समसामयिक चुनौतियों के परिप्रेक्ष्य में अन्तर्राष्ट्रीय स्तर पर जिम्मेदारियां निर्वाह करता रहा है, जैसे भारत में आतंकवाद से निपटने के लिए अनेक देशों के साथ संयुक्त कार्यदल बनाये हैं पुनः आतंकवाद की समाप्ति के लिए भारत ने अपना राष्ट्रीय प्रतिवेदन भी प्रस्तुत किया है। इन उपायों में उन उपायों को भी शामिल किया गया है, जिनका उल्लेख संयुक्त राष्ट्र सुरक्षा परिषद के 1373वें प्रस्ताव में किया गया है, जिसे 28 सितम्बर, 2001 में पारित कर परिषद ने अन्तर्राष्ट्रीय आतंकवाद से निपटने की व्यापक रूपरेखा प्रस्तुत की है। एक तरफ तो भारत की सुरक्षा परिषद की स्थाई सदस्यता के विपक्ष में अमेरिका खड़ा है तो दूसरी तरफ अमेरिका के अंदर भारत के समर्थक मौजूद हैं।

अमेरिका का भारत विरोध :–

भारत सुरक्षा परिषद के विस्तार का पक्षधर हैं। भारत चाहता है कि उसे विस्तारित सुरक्षा परिषद में स्थायी सदस्यता प्रदान की जाये और इसके लिए संयुक्त राष्ट्रसंघ के चार्टर में संशोधन किया जाना अनिवार्य हैं। संयुक्त राष्ट्र संघ को महासभा में सुरक्षा परिषद के सुधार के लिए मंजूर किये गये एक प्रस्ताव के तहत कम से कम दो तिहाई सदस्यों की मंजूरी के बिना सुरक्षा परिषद की सदस्यता में बढ़ोत्तरी और न्याय संगत प्रतिनिधित्व के सवाल और इससे जुड़े मुद्दों पर कोई फैसला या प्रस्ताव महासभा स्वीकार नहीं करेगी।[7]

संयुक्त राष्ट्र संघ में अमेरिका की प्रतिनिधि सुश्री मैडलिन अल्ब्राइट ने 11 सितम्बर 1995 को जकार्ता में कहा,''उनकी सरकार सुरक्षा परिषद के विस्तार करने का समर्थन करती है। परिषद की सदस्य संख्या 20 होनी चाहिये। जर्मनी और जापान को सुरक्षा परिषद की सदस्यता दी जाये। परन्तु वह सुरक्षा परिषद में भारत की स्थायी सदस्यता को स्वीकार नहीं करेगी।''[8]

भारत के स्थायी सदस्यता के दावे पर अभी तक की सबसे अधिक कड़ी प्रतिक्रिया 22 जुलाई 1999 को अमेरिका ने दी। अमेरिका ने स्थायी सदस्यता पाने के भारत के प्रयासों का समर्थन करने की किसी भी संभावना से इन्कार किया। अमेरिका के विदेश विभाग के प्रवक्ता जेम्स रूबिन ने कहा, ''अमेरिका किसी भी तरह से भारत की इस दावेदारी का समर्थन नहीं करेगा। अमेरिका द्वारा भारत की इस दावेदारी का समर्थन करने की कल्पना भी नहीं की जानी चाहिये।''[9]

अमेरिका में भारत समर्थक :–

अमेरिका के उच्चसत्तसीन लोग भारत विरोधी रूख अपनाते हैं वही अनेक लोग

भारत समर्थक रूख रखते हैं।

अमेरिका के पूर्व राष्ट्रपति जॉर्ज बुश नवम्बर 1995 में मुम्बई में 'सिटी बैंक एशियाई नेतृत्व श्रृंखला' पर अपना भाषण देने आये। उस समय बुश ने भारत को स्थायी सदस्यता देने की वकालत करते हुए कहा, ''सुरक्षा परिषद का विस्तार करने की आज बहुत आवश्यकता है। भारत दुनिया का सबसे बड़ा गणतंत्र है और एक ताकत के रूप में उभर रहा है। भारत को परिषद में सदस्यता मिलनी चाहिये।''[10]

अमेरिकी कांग्रेस के अनेक प्रभावशाली सदस्य भी भारत को स्थायी सदस्यता दिये जाने के पक्षधर हैं। डेमोक्रेटिक पार्टी के सांसद और कांग्रेस के भारत समर्थक गुट के सहअध्यक्ष फ्रेंलफ्लोन ने कहा, ''भारत जैसे बड़े देश को सुरक्षा परिषद में प्रतिनिधित्व का अवसर मिलना चाहिये।'' डेमोक्रेटिक सांसद ब्रैंड शरमन ने कहा, ''विश्व की आबादी का पांचवां हिस्सा जिस देश में रहता है, सुरक्षा परिषद में उसकी स्थायी सीट नहीं हो पाने की बात कुछ ठीक नहीं लगती।'' इसके अतिरिक्त डेमोक्रेटिक पार्टी के ही एडिबर्ननाइस, रिपब्लिकन पार्टी के एडवर्ड रामस जॉन फांकस और ब्रांसटैक्स मोरेल्ला ने भी पलोन का समर्थन किया।[11]

डेमोक्रेटिक सांसद फ्रैंक पैलोन ने अन्य सदस्यों के साथ 30 अप्रैल 1998 को कांग्रेस में एक प्रस्ताव रखा जिसमें सुरक्षा परिषद में भारत की स्थायी सदस्यता के लिए उम्मीदवारी का समर्थन करने का आग्रह किया गया।[12]

कांग्रेस की अन्तर्राष्ट्रीय संबंध समिति के अध्यक्ष बैजामिन गिलमैन और समिति के प्रतिष्ठित सदस्य डैमोक्रेट सैम गेजडेंसन के साथ 65 अमेरिकी सांसदों ने राष्ट्रपति बिल क्लिंटन से आग्रह किया कि उन्हें सुरक्षा परिषद की स्थायी सदस्यता के लिए भारत के दावे का समर्थन करना चाहिये।[13]

अमेरिका प्रारम्भ से ही कहता रहा है कि सुरक्षा परिषद की स्थायी सदस्यता पाने का एक मात्र मापदण्ड योग्यता है अमेरिका मानता है कि भारत वो सभी योग्यतायें पूरी करता है लेकिन वो इन सभी को नजरान्दाज कर देता है। अमेरिका के विदेश उपमंत्री प्रिम्स्टन लीमैन कहते हैं,''सुरक्षा परिषद का स्थायी सदस्य बनने के लिए भारत के पास जनसंख्या, अर्थव्यवस्था और विश्व का सबसे बड़ा लोकतांत्रिक देश होने के नाते सभी योग्यतायें मौजूद हैं लेकिन भारत की उम्मीदवारी पर जब तक दक्षिण एशियाई देशों के बीच आम सहमति नहीं बन जाती तब तक अमेरिका भारत की उम्मीदवारी का समर्थन नहीं कर सकता।''[14]

अमेरिका के प्रस्ताव के अनुरूप यदि सुरक्षा परिषद का विस्तार संम्भव हुआ तो सुरक्षा परिषद् के 10 स्थायी सदस्य निम्नलिखित हो सकते है अमेरिका, रूस, ब्रिटेन, चीन, फ्रांस, जर्मनी, जापान, दक्षिण अफ्रीका, भारत और ब्राजील इस प्रकार सुरक्षा परिषद् में यूरोप से 4, एशिया से 3, अफ्रीका से 1, लैटिन अमेरिका से 1 और दक्षिण अमेरिका से 1 स्थायी सदस्य रहेंगें।

भारत की स्थायी सदस्यता के लिये जरूरी होगा कि भारत को एशियाई राष्ट्रों का व्यापक समर्थन मिले। इसके अतिरिक्त भारत को जिन मूल्यों और सिद्धान्तों को लेकर गुट

निरपेक्ष राष्ट्रों में सम्मान और स्थान मिला है और सार्थक भूमिका का निर्वाह किया है, हम समझते है उस बुनियाद पर भारत शीतयुद्धोत्तर काल में नेतृत्व की नयी दिशायें तय कर सकता है। स्थायी सदस्यता इस दिशा में मील का पत्थर होगा। अतीत में नेहरू जी ने सिद्धान्तों के आधार पर एक ऐसा निर्णय लिया जिससे भारत संयुक्त राष्ट्रसंघ की सुरक्षा परिषद में स्थायी सदस्यता नहीं ले पाया। जब शीतयुद्ध के संबंध में अमेरिका और चीन के मध्य कटुता अत्यधिक बढ़ गयी तब अमेरिका स्थायी सदस्यता के लिए चीन की अपेक्षा भारत में इच्छुक था। स्थायी सदस्यता के लिए चीन की कुओ मिन तांग की सरकार का दावा भी उतना सशक्त नहीं रहा। अतः वाशिंगटन का विचार था कि भारत को स्थायी सदस्य बनाये जाने से तीन लक्ष्यों को प्राप्त किया जा सकता है– प्रथम इससे सुरक्षा परिषद में साम्यवादी शक्तियों की उपस्थिति कम हो जायेगी। द्वितीय ऐसा महत्वपूर्ण पद / स्थान देने पर भारत को अपने अमेरिका के पक्ष में लिया जा सकता है, तृतीय यदि भारत इस प्रस्ताव को स्वीकार कर लेता है तो भारत चीन के बीच कटुता बढ़ जायेगी।[15]

G-4 देशों का प्रस्ताव :–

जी–4 देशों (भारत, ब्राजील, जर्मनी और जापान) ने संयुक्त राष्ट्र सुरक्षा परिषद के विस्तार के लिए एक मसौदा महासभा में 11 जुलाई, 2005 को चर्चा के लिए पेश किया। इस प्रस्ताव में सुरक्षा परिषद के सदस्यों की संख्या 15 से बढ़ाकर 25 करने की मांग करते हुए 10 नये सदस्यों को शामिल करने की बात कही गई है। इन नव प्रवेशी सदस्यों में से 6 सदस्यों को स्थाई दर्जा देने की मांग रखते हुए अगले 15 वर्षों तक वीटों शक्ति न देने की बात कही गई है। जी–4 के यह देश संयुक्त रूप से प्रस्तावित विस्तार में स्थाई सीटों के लिए प्रयासरत हैं। जबकि दो अन्य स्थाई सदस्यों का चयन अफ्रीकी देशों से किया जाना है। जिनके नामों की घोषणा की जानी है। उक्त प्रस्ताव जी–4 की ओर से ब्राजील के प्रतिनिधि रोनाल्डों मोता सार्देन बर्ग ने प्रस्तुत किया। सह प्रायोजक के रूप में इस मसौदे पर फ्रांस, पोलैण्ड, डेनमार्क आदि 23 राष्ट्रों ने भी हस्ताक्षर किये।

सुरक्षा परिषद में स्थाई सदस्यता के लिए जी–4 देशों के प्रमुख व्यक्तिगत आधार निम्नवत् है–

भारत :– यह सबसे बड़ा लोकतांत्रिक देश हैं।

ब्राजील :– सुरक्षा परिषद में लैटिन अमेरिकी देशों की रिक्तता पूरी करने में समर्थ विकासशील देश है।

जर्मनी :– आर्थिक रूप से शक्तिशाली जर्मनी संयुक्त राष्ट्र की तमाम वित्तीय जरूरतों को पूरा कर सकता है।

जापान :– अमेरिका के बाद संयुक्त राष्ट्र संघ को सर्वाधिक वित्तीय सहायता जापान ही देता है।

G-4 के प्रस्ताव पर प्रतिक्रिया :–

जी–4 के मसौदे पर प्रतिक्रिया करते हुए अमेरिकी विदेश मंत्री कोंडोलिजाराईस का मत रहा कि सुरक्षा परिशद में फिलहाल किसी बदलाव की आवश्यकता नहीं है। चीन और

पाकिस्तान ने जी–4 के प्रस्ताव की तीखी आलोचना की। पुनः पाकिस्तान और इटली के नेतृत्व में यूनाइटिंग फार कंशेसर्स (UTC) अर्थात 'काफी क्लब' ने जी–4 के प्रस्ताव के काट रूप में पेश किये गये अपने मसौदे में कहा कि सुरक्षा परिशद में सभी दस नये सदस्यों को अस्थाई दर्जा ही मिलना चाहिये। दूसरे शब्दों में यद्यपि UTC जी–4 की तरह सुरक्षा परिषद में दस नये सदस्यों को शामिल करवाना चाहता है, तथापि UTC स्थाई सदस्यों की संख्या बढ़ाने का विरोध कर रहा है। जबकि जी–4 ने स्थाई सदस्यता की बात अपने मसौदे में प्रमुखता से रखी है।

उक्त प्रतिक्रियाओं के अतिरिक्त सबसे महत्वपूर्ण प्रतिक्रिया अफ्रीकी देशों की है। 4 अगस्त, 2005 को अफ्रीकी संघ के राष्ट्र प्रमुखों का शिखर सम्मेलन इथोपिया की राजधानी अदिश अबाबा में हुई, जिसमें उन्होंने सुरक्षा परिषद में वीटों अधिकार सहित दो स्थाई सीटों की अपनी मांग दोहराई और जी–4 का प्रस्ताव इसलिए ठुकरा दिया क्योंकि उसमें अफ्रीकी संघ को बिना वीटों शक्ति के दो स्थाई सीटें देने पर सहमति जताई गई थी। अफ्रीकी संघ के 53 सदस्य देश है, अतः इतने बड़े गुट के अलग रहने पर संयुक्त राष्ट्र महासभा में जी–4 का प्रस्ताव स्वीकार होना असंभव–प्राय है। क्योंकि संयुक्त राष्ट्र संघ के 191 सदस्य देशों में से, जी–4 का प्रस्ताव पारित करने के लिए 2/3 सदस्यों अर्थात 128 देशों का समर्थन आवश्यक है। जी–4 का अनुमान था कि 15 कैरिबियाई देशों के साथ अफ्रीकी संघ का समर्थन उसे सहजता से प्राप्त हो सकेगा। सामान्यतः जी–4 के प्रत्येक दावेदार देश को उसके पड़ोसी के विरोध का मुखर सामना करना पड़ रहा है। जैसे चीन द्वारा जापान का, पाकिस्तान द्वारा भारत का विरोध। जिस प्रकार चीन का विचार है कि यदि जापान का समर्थन करने वाले इस समूह से भारत अपने आपको अलग कर ले, तो वह भारत की दावेदारी का समर्थन कर सकता है, इसी प्रकार पाकिस्तान जापान की दावेदारी का समर्थन करने को तैयार है, बशर्ते जापान भारत का समर्थन करने वाले जी–4 से अलग हो जाये।

समूह–4 की कूटनीति के ऊपर उठकर यदि सामान्य स्थिति देखा जाये तो स्पष्ट है कि विकसित देशों में जर्मनी और जापान को सुरक्षा परिषद की स्थाई सदस्यता का प्रमुख दावेदार माना जा रहा है, तो वहीं विकासशील देशों में भारत सबसे उपयुक्त दावेदार है। अमेरिका द्वारा सुरक्षा परिषद में स्थाई सदस्यता के लिए मानक सुझाव दिये गये हैं–

जनसंख्या का आकार, सैन्य क्षमता, संयुक्त राष्ट्र की शांति रक्षक गतिविधियों में भागीदारी की क्षमता, जनतंत्र और मानवाधिकारों के प्रति प्रतिबद्धता, संयुक्त राष्ट्र के लिए वित्तीय योगदान की क्षमता, आतंकवाद के विरूद्ध प्रतिबद्धता जनसंहारक हथियारों का प्रसार रोकने के प्रति वचनबद्धता और भौगोलिक संतुलन।

सुरक्षा परिषद की स्थायी सदस्यता के लिए हम यदि योग्यताओं की बात करें तो भारत के पास सभी योग्यतायें मौजूद है। जनसंख्या की दृष्टि से भारत विश्व में चीन के बाद दूसरे नम्बर पर है, प्राकृतिक संसाधनों के मामलों में दुनिया के सबसे समृद्ध देशों में से एक है। मानव सम्पदा की दृष्टि से भी विश्व में पहला स्थान है। भारत में जितने डॉक्टर, इन्जीनियर और तकनीकी विशेषज्ञ बनते हैं, उतने और कहीं नहीं। लोकतंत्र का इतिहास भारत में पचास

साल पुराना है और भारतीयों ने लोकतंत्र के प्रति ऐसे नाजुक क्षणों में भी आस्था व्यक्त की है कि यदि कोई और देश होता तो टूट जाता। भारत दुनिया की अत्यन्त प्राचीन वैदिक सभ्यता की कर्मस्थली रहा है। धर्म, दर्शन, संस्कृति, राजनीति, अर्थव्यवस्था, शक्ति और विज्ञान के इतने मजबूत आधार होने के बावजूद आखिर भारत को किस तर्क से सुरक्षा परिषद की स्थायी सदस्यता से वंचित किया जा सकता है।

स्वाभाविक रूप से इन मानकों में से अधिकांश पर भारत खरा उतरता है। जहां तक संयुक्त राष्ट्र के वित्तीय योगदान का प्रश्न है, यद्यपि भारत जापान की तरह वित्तीय सहयोग नहीं करता किन्तु समय पर संयुक्त राष्ट्र संघ को वित्तीय योगदान में उसकी छवि बेहतर है। इन्हीं उक्त तथ्यों को दृष्टिपथ में रखते हुए रूस, फ्रांस और ब्रिटेन जैसे स्थाई सदस्यों ने भारत का खुला समर्थन किया है। इससे न केवल भारत की दावेदारी को बल मिला है, अपितु विकासशील देशों के अगुवा प्रतिनिधि के रूप में भारत की अन्तर्राष्ट्रीय छवि पर भी मुहर लगी है। चीन ने भी कहा है कि यदि भारत सुरक्षा परिषद में स्थाई सदस्य बनता है तो उसे खुशी होगी। इस कथन को भी न केवल चीन द्वारा भारत को क्षेत्रीय शक्ति रूप में स्वीकृति देने अपितु दक्षिण एशिया की दोनों ही प्रमुख शक्तियों द्वारा भविष्य में सहयोग और सहअस्तित्व के मूल्यों के अपनाने के आधार के रूप में देखा जा सकता है। अन्ततः स्पष्ट है कि सदस्यता किसी की भी हो, कैसा भी हो किन्तु संयुक्त राष्ट्र सुरक्षा परिषद की गत्यात्मकता, बहुआयामिता और प्रासंगिकता बनाये रखने में उसका पुनर्गठनात्मक विस्तार अपरिहार्य है और भारत की दावेदारी संयुक्त राष्ट्र संघ की लोकतांत्रिकता की सबसे बड़ी कसौटी बन चुका है।

सन्दर्भ

1. डॉ0 वैकुण्ठनाथ सिंह : अन्तर्राष्ट्रीय संगठन (ज्ञानदा प्रकाशन नई दिल्ली 1995); पृ0 78
2. डॉ0 वैकुण्ठनाथ सिंह : अन्तर्राष्ट्रीय संगठन (ज्ञानदा प्रकाशन नई दिल्ली) 1995; पृ0 80
3. डॉ0 पीताम्बर दत्त कौशिक : अन्तर्राष्ट्रीय सम्बन्ध (कल्याणी पब्लिशर्स, दिल्ली) 1995; पृ0 268
4. डॉ0 मथुरा लाल शर्मा : अन्तर्राष्ट्रीय सम्बन्ध (कालेज बुक डिपो जयपुर, 1994—95); पृ0 57
5. संयुक्त राष्ट्र संघ, चार्टर अनुच्छेद—24
6. जे0 एन0 दीक्षित : भारतीय विदेश नीति (प्रभात प्रकाशन नई दिल्ली) 1999; पृ0 247
7. अमर उजाला, मेरठ 25 नवम्बर 98; पृ0 5
8. अमर उजाला, मेरठ 13 सितम्बर 1995; पृ0 3
9. अमर उजाला, मेरठ, 23 जुलाई 1999; पृ0 1—2
10. अमर उजाला, मेरठ, 29 नवम्बर 1995; पृ0 1
11. दैनिक जागरण, आगरा, 15 मार्च 1998; पृ0 7
12. दैनिक जागरण, आगरा, 1 मई 1998; पृ0 7
13. दैनिक जागरण, आगरा, 19 मई 2000; पृ0 9
14. दैनिक जागरण, आगरा, 19 अक्टूबर 1997; पृ0 5
15. जे0 एन0 दीक्षित : भारतीय विदेश नीति; पृ0 97

भारत की आंतरिक सुरक्षा पर साइबर आतंकवाद का प्रभाव

डॉ0 अशोक कुमार तिवारी
एसोसिएट प्रोफेसर
रक्षा एवं स्त्रातेजिक अध्ययन विभाग,
वी0एस0एस0डी0 कालेज, कानपुर

डॉ0 राम तिवारी
असिस्टेंट प्रोफेसर
रक्षा एवं स्त्रातेजिक अध्ययन विभाग,
वी0एस0एस0डी0 कालेज, कानपुर

जंग अब सीमाओं पर ही नहीं होती। पहले युद्ध हथियारों की सहायता से लड़े जाते थे। लेकिन सन् 1990 ई0 के बाद से युद्ध का एक नया पहलू सामने आया वह साइबर आतंकवाद है इस कृत्य के अन्तर्गत कम्प्यूटर पर बैठकर एक व्यक्ति वृहत स्तर पर आतंकी घटनाओं को अंजाम दे सकता है।

साइबर आक्रमण की व्यापकता को देखते हुए ''अमेरिका में सन् 1997 ई0 में 'क्रिटिकल इन्फ्रास्ट्रक्चर प्रोटेक्शन' पर यू0एस0 प्रेसीडेंट कमीशन में इस पर गहन विश्लेषण किया गया जिसके निष्कर्ष बाद में सन् 1998 ई0 प्रेसीडेन्सियल डायरेक्टिव तिरसठ में पलिक्षित हुए।''[1] इस प्रकार यह दृष्टिगत होता है कि एक चातुर्य रणनीति के तहत सूचना क्रांति उन राष्ट्रों, जो विध्वंस की प्रवृत्तियों को बढ़ावा देते है अथवा उन आतंकवादी संगठनों के लिए विशेष लाभदायक है जो साइबर आक्रमण के द्वारा किसी राष्ट्र के निर्णायक आधारभूत संरचना को निशाना बनाते हैं।

साइबर आतंकवाद का अर्थ है किसी भी कम्प्यूटर के द्वारा किसी अन्य व्यक्ति या राष्ट्र के निजी पहलू तथा उसके कम्प्यूटर से छेड़छाड़ करना, किसी भी इलेक्ट्रॉनिक उपकरण का प्रयोग कर अन्य व्यक्ति के व्यक्तिगत पहलू से खिलवाड़ करना भी साइबर क्राइम की श्रेणी में आता है। ''साइबर क्राइम के अंतर्गत बेबसाइट हैकिंग, पासवर्ड ब्रेक, ई–मेल–पासवर्ड थैफ्ट, ई–मेल स्नूफिंग, इंटरनेट बेबसाइट हैकिंग, पासवर्ड कोपिंग तथा बड़े स्तर पर वायरस का प्रयोग कर प्रतिपक्ष की कम्प्यूटर प्रणाली ठप करना है।''[2]

सूचना प्रौद्योगिकी के क्षेत्र में हो रही प्रगति के साथ जहॉ इंटरनेट का प्रयोग करने वालों की संख्या बढ़ी है वही दूसरी तरफ साइबर अपराध के मामलों में वृद्धि होती जा रही है। संप्रति विश्व के लगभग 10 लाख लोग साइबर आतंक से प्रतिवर्ष ग्रसित हो रहे है। भारत में भी साइबर अपराध के मामलें में निरन्तर वृद्धि हो रही है। साइबर अपराध से तात्पर्य है – ई–मेल पर धमकी भेजना, अश्लील सामग्री का प्रसार करना, गोपनीय दस्तावेजों तक पहुॅचने की कोशिश करना।

केन्द्रीय गृहमंत्रालय के अधीन राष्ट्रीय अपराध रिकार्ड ब्यूरों द्वारा देश भर से एक एकत्र किये गये आंकड़ों के मुताबिक ''वर्ष 2002–2005 तक की अवधि में साइबर अपराध के तहत 1,1175 मामलें दर्ज किए गए है।''[3] यह आंकड़ा निरन्तर बढ़ रहा है। साइबर अपराध में प्रकाशन सम्बन्धी तथ्यों को चुराने के मामलें 33 प्रतिशत तथा हैकिंग के मामलें 30 प्रतिशत तक पहुॅच गये है। इन आतंकी कृत्यों में लिप्त 81 फीसदी लोग 18 से 45 वर्ष की आयु वर्ग तथा 19 फीसदी लोग 45 से 60 वर्ष की आयु के है। साइबर आतंकवाद की वृद्धि से निजी व्यवसायिक व सरकारी संस्थान अधिक असुरक्षित हो गये है क्योंकि आतंकी कहीं से बैठकर उनकी महत्वपूर्ण जानकारी केवल चुरा ही नहीं सकते बल्कि उन्हें बदल सकते है। यही नहीं वे चाहे तो पूरी प्रणाली ठप कर सकते है। ई–मेल अथवा इंटरनेट के द्वारा डीप थ्रोट और मास्टर्स पैराडाइज जैसे प्रोग्राम की सहायता से हजारो कि0मी0 की दूरी पर स्थित कम्प्यूटरों को छेड़ सकते है। पश्चिमी देशों में ऐसे अपराधी (आतंकी) अरबों डालर कमा रहे है। क्योंकि साइबर समस्याओं से बचने के लिए व्यवसायिक कम्पनियां साइबर आतंकियों को मुॅह मांगी रकम देने पर मजबूर है। इन आतंकियों के ग्रुप ज्यादातर उन सरकारी उद्योगों को अपना निशाना बनाते है जिनका सारा कामकाज कम्प्यूटर पर आधारित है।

भारत–पाकिस्तान साइबर युद्ध भी चरम पर है हैक की गई हर बेबसाइट के बदले पाकिस्तान भारत की दस बेबसाइट हैक करता है। अभी जल्द ही पाकिस्तानी हैकरों ने भारत के कई महत्वपूर्ण संस्थानों की बेबसाइट को नुकसान पहुॅचाया ''ऑकड़ों के अनुसार 2008 के पहले 6 माह में ही उसने 856 साइटें हैक की, जबकि 2007 में यह आंकड़ा 587 था। इनमें से अधिकांश हमले एफ बी एच (फेडरल ब्यूरों ऑफ हैकर) नामक हैकर ग्रुप ने किए।''[4] 'एथिकल हैकर' 'अंकित फाडिया' ने हैकिंग पर जो एक 25 पेज का श्वेत पत्र तैयार किया है उसमें उसने कहा है कि पाकिस्तानी हैकर्स हर माह भारत की 40 से 50 बेबसाइटों को हैक करते है। यह तथ्य भारत सरकार के पूर्व संचार और सूचना प्रौद्योगिकी राज्यमंत्री 'डॉ0 शकील अहमद की लोकसभा में इस स्वीकारोक्ति से भी रेखांकित होता है कि ''2005 से 2008 के बीच हैकरो ने भारत की 11 महत्वपूर्ण बेबसाइटों को हैक किया, जिनमें रेल मंत्रालय, मुम्बई की एयर कार्गो कस्टम्स, फारवर्ड मार्केट कमीशन, नेशनल इंस्टीट्यूट ऑफ हेल्थ एंड फेमिली वेलफेयर, नेशनल इंस्टीट्यूट ऑफ सोशल डिफेंस, प्रशासनिक सुधार एवं जन शिकायत विभाग, वायरलेस प्लानिंग एण्ड कोआर्डिनेशन विंग, भारत संचार निगम लिमिटेड, टेलीफोन रेगुलेटरी अथॉरिटी ऑफ इण्डिया, सूचना प्रौद्योगिकी विभाग और एंथ्रॉपालॉजिकल सर्वे ऑफ इंडिया शामिल है।''[5]

''सन् 2008 के अगस्त माह में एन0डी0टी0वी0 चैनल की बेबसाइट उस समय हैक की गई जब सारी दुनिया चीन में हो रहे ओलंपिक खेलों को देख रही थी।''[6] हालत यह हो गई कि

जो भी उस साइट को अपने कम्प्यूटर पर देख रहा था, वहॉ पर वह वायरस पहुॅच गया। इसी क्रम में भारत अपने पड़ोसी देश चीन के भी 'साइबरवार' से त्रस्त है। हाल में ही भारत के कई सैन्य संस्थानों पर साइबर हमले हुए। कनाडा के कुछ साइबर अनुसंधानकर्ताओं के अनुसार चीनी हैकर भारत के रक्षामंत्रालय और प्रधानमंत्री कार्यालय तक घुसपैठ कर चुके है। वैसे तो भारत सहित सभी देश एक दूसरे के कम्प्यूटर नेटवर्क में ताकझांक करते रहते है मगर चीनी हैकरों ने इस मामलें में विशेष महारत हासिल कर रखी है।

विश्व के कई देश साइबर आतंकवाद के प्रति गंभीर नही है। जहॉ तक भारत का सवाल है उसकी शीर्ष खुफिया एजेंसी केन्द्रीय जॉच ब्यूरों ने नौ एशियाई देशों के साथ सहयोग समझौता कर रखा है यह समझौता फरवरी 2003 में हुआ था। जिसमें भारत, चीन, जापान, इंडोनेशिया, दक्षिण कोरिया, फिलीपींस मलेशिया व थाईलैण्ड शामिल है। इस समझौते के अन्तर्गत साइबर अपराधियों तक पहुँचने के लिए संबद्ध देशों के मध्य सूचनाओं के आदान–प्रदान हेतु 'वर्चुअल प्राइवेट नेटवर्क नामक प्रणाली को विकसित करने तथा साइबर क्राइम टेक्नोलॉजी इन्फारमेशन नेटवर्क सिस्टम (CTINS) से आपस में जुडने की बात निश्चित हुई थी परन्तु भारत पर नित नये हो रहे साइबर हमले यह दर्शा रहे है कि इन समझौतो का कोई लाभ नहीं है।

कहा जा सकता है कि विश्व में अगला निर्णायक युद्ध साइबर युद्ध होगा क्योंकि सारी जानकारियां कम्प्यूटर नेटवर्क में ही संग्रहित है और इंटरनेट ही सूचनाओं के आदान–प्रदान का सबसे प्रमुख जरिया है। यदि नब्ज रूपी कम्प्यूटर नेटवर्क ध्वस्त हो जाय तो वह देश पहले ही मनोवैज्ञानिक हताशा का शिकार हो जाएगा। चीन भारत के विरूद्ध धीमी रफ्तार से साइबर युद्ध चला रहा। भारत इस आतंकी युद्ध प्रणाली से निपटने में सक्षम नहीं है। हालांकि भारत आई0टी0 शक्ति कहलाता है मगर ब्राडबैंड के प्रयोग और इंटरनेट कनेक्शनों की संख्या मामलें में वह चीन से पीछे है। अतः इस विषम स्थिति में भारत को साइबर आतंकवाद से निपटने हेतु ठोस रणनीति एवं कानून बनाना होगा क्योंकि भारत की प्रगति में भविष्य में अब सबसे बड़ी बाधा साइबर आतंकवाद ही बनने वाला है।

संदर्भ सूची

1. रक्षा अनुसंधान – 26 जनवरी 2010–पृ0सं0 46
2. इंडिया टूडे – 15 दिसम्बर 2010 – पृ0सं0 15
3. दैनिक जागरण – डॉ0 लक्ष्मीशंकर यादव – 3 फरवरी 2006
4. शुक्रवार पत्रिका – 12 फरवरी 2010 – पृ0सं0 16
5. शुक्रवार पत्रिका – 7 मई 2010 – पृ0सं0 18
6. द टाइम्स ऑफ इण्डिया – 15 सितम्बर 2008

अरुणाचल प्रदेश की जनजातियों की सामाजिक पंचायतें

—डॉ0 रतन लाल
एम0एस0डी0ए0आई0 कॉलेज—जसपुरा—बांदा
डॉ0 गीता सिंह कुशवाहा
जुगल देवी स0वि0 मन्दिर— कानपुर

भारत के उत्तर – पूर्वी छोर पर वनों, पर्वतों, घाटियों की हरी—भरी भूमि के उस अंचल का नाम 'अरुणाचंल' है जिस पर सर्वप्रथम भारत में प्रातः कालीन सूर्य की स्निग्ध, कोमल और सुरम्य अरूण किरणें पडती है। अरुणाचंल प्रदेश पूर्वोत्तर में 26° 28' से 28° 30' उत्तरी अक्षांश और 91° 30' से 97° 30' पूर्वी देशान्तरों के बीच स्थित है। पश्चिम में भूटान से 160 किलोमीटर, उत्तर – पूर्व में चीन से 1030 किलोमीटर तथा पूर्व में म्यामांर से 440 किलोमीटर घिरा है। दक्षिण भाग असम राज्य से 704 किलोमीटर सीमा रेखा से मिलता है एवं दक्षिण—पूर्वी भाग नागालैण्ड से मिलता है। अरुणाचंल प्रदेश का कुल क्षेत्रफल 83,743 वर्ग किलोमीटर है, जिसमें से 51,540 वर्ग किलोमीटर क्षेत्र वन का है। इस प्रकार पूरे प्रदेश के लगभग 62 प्रतिशत भाग वनाच्छादित हैं। यहां 50 से भी अधिक नदियों का जाल सा बिछा हैं। प्रदेश के उत्तरी भाग में जाडे में बर्फ जम जाती है। मध्य भाग में जाडे में कडाके की ठंड पडती है। इस क्षेत्र में अप्रैल से सितम्बर तक वर्षा होती है। यहां पर वर्ष में 1,000 मिलीमीटर से 6,000 मिलीमीटर तक वर्षा होती है।

भारत के पूर्वोत्तर राज्यों में अरुणाचल प्रदेश प्राकृतिक छटा से परिपूर्ण तथा सुहावना प्रदेश है। यह आज तक विभिन्न जनजातियों की अनुपम सांस्कृतिक विरासत यथावत् संजोए रखने में सक्षम रहा है। वैसे तो जनजाति का नाम सुनने पर प्रायः आंखों के सामने अर्धनग्न, काले, गरीब, पिछडे, वस्त्रहीन तथा अर्द्ध सभ्य लोगों का चित्र आ जाता है, किन्तु अरुणाचल प्रदेश की जनजातियों के सन्दर्भ में यह बात सर्वथा असत्य सिध्द होती है। यहां के लोग मंगोल नस्ल के हैं। इनका रंग गोरा और साफ हैं। ये लोग बडे ही शिष्ट, सभ्य, सरल और शांत स्वभाव के परिश्रमी होते हैं। पूरे प्रदेश में पच्चीस प्रमुख तथा 110 से ज्यादा इनकी उपजातियों है। 2011 की जनगणना के अनुसार इनकी जनसंख्या 13,82,611 है। प्रदेश में 16 जिले हैं। अरुणाचंल प्रदेश के लोगों का प्रकृति से घनिष्ठ लगाव है। यहां के सभी जिलों के नाम प्रदेश की प्रमुख नदियों के नाम पर रखे गए हैं। बहुत से स्थानों और कुछ महत्वपूर्ण योजनाओं के नाम भी नदियों के नाम पर ही है।

अध्ययन का उद्देश्यः—

प्रस्तुत शोध—प्रपत्र का उद्देश्य यह है कि अरुणाचंल प्रदेश की संस्कृति समाज का

आपस में एक दूसरे के साथ किस प्रकार का सामन्जस्य एवं व्यवहार है। दूसरा यह भी जानना कि यहां की जनजातीय समुदाय की अपनी पंचायत पर कितना नियन्त्रण व विश्वास है, जिसके कारण आज भी इनकी अपनी संस्कृति बची हुयी है। इन जनजातियों के आर्थिक, सामाजिक, धार्मिक, राजनैतिक, शैक्षिक और सांस्कृतिक पहलुओं के विकास में यह समाजिक पंचायत कितना योगदान दे रहा है।

अध्ययन की विधितंत्र :–

अध्ययन क्षेत्र अरुणाचल प्रदेश की जनजातियों की सामाजिक पंचायत की जानकारी प्राप्त करने के लिए प्रदेश की सभी प्रमुख पच्चीस जनजातियों के बारे में गहन अध्ययन एवं भ्रमण किया गया। प्रदेश में निवास करने वाले इन जनजातियों से प्रत्यक्ष मिलकर एवं परिवार प्रश्नावली के माध्यम से साक्षात्कार के द्वारा सामाजिक रीति–नीति, पंचायत व्यवस्था, ''विलेज कौंसिल'' (गांव सभा) का नियन्त्रण आदि जानकारियां प्राप्त की गयी।

विश्लेशण एवं सामाजिक व्यवस्थाः–

अरुणाचल प्रदेश की जनजातियों की जब सामाजिक पंचायत की चर्चा करते है तो दो बातें सामने आती है– पहली यह कि अरुणाचल का जनजातीय समाज आज भी अपनी परम्परा, रीति–रिवाज और प्राचीन संस्कृति में इतना अधिक विश्वास करता है कि इसके अतिरिक्त वह अन्य कोई बात न तो सुनना पसन्द करता है और न ही मानने को तैयार होता है अर्थात् अपनी संस्कृति के प्रति पूर्ण रूपेण संकल्पित है। सम्भवतः यही कारण है कि स्वतंन्त्रता के लगभग छः दशक बाद भी ये लोग राष्ट्र की मुख्य धारा में नही जुड पाये है।

दूसरी बात यह कि नयी पीढी आधुनिकता के छत्र–छाया से आच्छादित होने के बाद भी अपनी संस्कृति के प्रति पूरी तरह से रुचि रखती है। यह युवा पीढी शैक्षिक, आर्थिक, सामाजिक एंव राजनैतिक सभी तरह से परिपक्व होने के बाद भी अपनी जनजातीय पंचायत व संस्कृति में घोर विश्वास रखती है। यही कारण है कि आज इस आधुनिकता की दौर से गुजरने के बाद भी इनकी पंचायत, सामाजिक बन्धन इतनी मजबूत और अनुशासित है कि कोई भी इसका चाह कर भी उल्लघंन नही कर पाता।

जनजातियों की सामाजिक पंचायतेः–

जनजातियों का सामाजिक जीवन उनके समुदाय में प्रचलित रीति–रिवाज के अनुसार चलता है, जो विलेज कौंसिल (गांव सभा) के नियंत्रण में होता है। जो लोग समाज के रीति–रिवाज का पालन नहीं करते, उनका सामाजिक बहिष्कार तक कर दिया जाता है। गांव सभाएं भी उनके परंपरागत कानूनों के अनुसार ही चलती हैं। हर जनजाति की अलग–अलग जातीय पंचायते हैं, जिन्हें अलग–अलग नामों से जाना जाता हैं आदी जनजाति में इसे केबांग सिंहफो में त्रातुंग दास, दोयी, तंगसा में खापना, खापोंग, खापा, वांचु में बांगचो, वांगसा, नोक्टे

में नगोथेम, खामती में मोकचूप, दिगारू एवं कामन मिशमी में फराई, अका में रेज, शेरदुक्पेन में जंग, आपातानी में बुलियांग और मोंपा में मंगजोबानों कहते हैं। कुछ स्थानों पर कौंसिल कहते है। कुछ जातीय पंचायते बहुत ही संगठित रूप से कार्य कर रही हैं– इनमें शेरदुक्पेन, अका, मोंपा और आदी जनजातियों की पंचायतें प्रमुख है। मोंपा की विलेज परिषदें (गांव परिषदें) बहुत ही संगठित है। इनको एक निर्धारित प्रोटोकाल (अनुशासन) का पालन करना होता है। प्रमुख स्थानीय गांववालों से विचार–विमर्श के बाद, गांव के त्सोरजेन (हेड मैन) के चुनाव हेतु एक पैनल बनाया जाता है। इस विषय पर कई–कई दिनों तक विचार–विमर्श चलता रहता है और आम सहमति का प्रयास किया जाता है। फिर तासोत्सांग जोन (जनरल असेंबली) मतपत्र द्वारा मतपेटी में अपना मत देकर त्सोरजेन (गांव हेड) का चुनाव करती है। फिर डी0सी0 इसका अनुमोदन करता है।

जनरल असेंबली में हर परिवार का प्रमुख सदस्य होता है। जनरल असेंबली की बैठक में उसका भाग लेना आवश्यक है। भाग न लेने पर उस पर जुर्माना होता है। परिवार –प्रमुख अपने स्थान पर किसी अन्य बालिग को भी उसमें भेज सकता है। गांव हेड का कार्यकाल 3 वर्श का होता है। अविश्वास अथवा मृत्यु की दशा में उसका स्थाना खाली हो जाता है।

गांव हेड को कोई वेतन नहीं दिया जाता। इसकी पूर्ति में वहां के निवासी प्रतिदिन उसके घर का कार्य करते हैं या एक व्यक्ति की मजदूरी के बराबर वस्तु या धन उसे देते हैं। गांव हेड अपने गांव में कार्यपालिका, न्यायपालिका, आर्थिक विकास एवं विधायी कार्य सम्पन्न करता है। इसके फैसले की अपील जनरल असेंबली अथवा उपयुक्त सरकारी अधिकारी के समक्ष की जा सकती है।

मोंपा की विलेज कौंसिल को मांगजोबाना या मांगजोम कहते है। मांग या मांगम का अर्थ है जनता, एवं जम या/जोबाना का अर्थ असेंबली होता है।

आदी जाति अपने रीति–रिवाज के मामले में लोकतांत्रिक मूल्यों में बहुत आगे है। इनकी विलेज कौंसिल को 'केबाग' कहते है। प्रदेश की अन्य जनजातियों की अपेक्षा यह कौंसिल अधिक शक्तिशाली होती है। इस जाति का व्यक्ति जब प्रौढ होता है, तभी इसका सदस्य हो सकता है। स्त्रियां प्रायः इसमें नहीं सम्मिलित की जाती है। हाँ कोई गवाही या शिकायत करनी होती है तो वे इसमें सम्मिलित होती हैं। आदि संस्कृति इसका आधार होती है। इसकी बैठक अधिकांश मोसुप या डेरे (कुंवारो के शयन–स्थल) में होती है। आदि पुजारियों का इस पर प्रभुत्व होता है।

इनकी पंचायते तीन स्तरीय है–

ग्राम स्तर की पंचायत को 'बाने केबांग' कहते थे। आवश्यकता पडने पर किसी मामले को देखने के लिए एक कमेटी बना दी जाती थी। इसको अतोक केबांग कहते थे। एक गांव के

दूसरे गांव के साथ विवाद को इंटर विलेज कौंसिल, जिसे 'बांगो केबांग' कहते थे, के पास भेजा जाता था। आजकल इसका बडा रूप आदी संसद् के रूप में है। इसमें सभी गांवों के लोग कई ग्रुपों में बंट जाते हैं। सभी बांगो केबांग में, गांवों के सभी सम्मानित व्यक्ति और जननेता एकत्र होते हैं। यह सबके कल्याण के लिए कार्य करती है। अका जाति के लोगों की गांव की कौंसिल लोकतांत्रिक आधार पर बनाई जाती है। इसे स्थानीय भाषा में 'मिल्ले' कहते है। किन्तु अका अब इसे असमी शब्द 'राइज' नाम से पुकारते हैं, जिसका अर्थ 'चौधरी' होता है। अका लोगों का विश्वास और भावना है कि युवकों की सदा बुद्धिमान और वृद्ध लोगों का सम्मान करना चाहिए।

ग्राम कौंसिल में ग्राम के सभी वरिष्ठ लोग सदस्य होते हैं। इसका एक हेड होता है, जो सबसे वरिष्ठ व्यक्ति होता है। अका भाषा में उसे 'नग्गू' (बडा व्यक्ति) कहते हैं। इसे गांव बूढा भी कहते हैं। अका समाज की सेवा और कार्यों को देखते हुए वह दो सबसे योग्य एवं कर्मठ व्यक्तियों को क्रमशः बूढा और गिब्बा पद प्रदान करता है। गांव बूढा की अनुपस्थिति में बूढा सब कार्य करता है। गिब्बा गांव के सभी जनहित के कार्यों में भाग लेता है तथा सोसाइटी में शांति–व्यवस्था कायम रखता है। बूढा और गिब्बा गांव की गतिविधियों से 'गांव बूढा' को अवगत कराते रहते है। गांव बूढा की अनुपस्थिति में वे विलेज कौंसिल की अध्यक्षता भी करते है। गांव कौंसिल किसी खुली जगह पर होती है, जिसमें सभी लोग सम्मिलित हो सकते हैं। कोई निर्णय आम सहमति या बहुमत से किया जाता है। इसमें व्यक्तिगत, पारिवारिक या सामूहिक सभी प्रश्नों एवं विवादों पर विचार होंता है। यह एक जनरल सभा का रूप ले लेती है। आदि जाति की तरह अंतर्ग्राम संबंधी मामलों का निर्णय भी यही करते हैं। इसमें 'नग्गू' की प्रमुख भूमिका होती है।

मिशमी जाति की पंचायत आर्बिटरी ढंग की होती है। मिशमी इसे 'अब्बाला' या 'केबाया' कहते है। कोई ऐसा व्यक्ति, जो किसी पक्ष में संबंधित न हो, उस विषय की जानकारी रखता हो, और दोनों पक्ष उसके नाम पर सहमत हों, वह 'केबाया' बन सकता है, चाहे वह उस गांव का हो या निकट के दूसरे गांव का। इसका निर्णय सबको मान्य होता है।

कामन मिशमी आर्बिट ग्रुप को 'फराई' कहते है। इनका केबांग दूसरी प्रकार का होता है, बल्कि ये लोग व्यक्तिगत सोसाइटी के समर्थक हैं। ये लोग अपने मुखिया के अनुयायी होते हैं, जो इस समाज का मेंबर होता है। मुखिया के यहां व्यक्तिगत और दूसरे मामले ले जाए जा सकते हैं । यदि कोई पक्ष इसके फैसले से संतुष्ट नहीं होता तो अपने किसी दूसरे प्रसिध्द, बुद्धिमान या प्रतिष्ठित व्यक्ति के यहां मामला ले जा सकता हैं वह कई लोगों की सलाह से इस विवाद का निर्णय कर देता है।

मिशमी मूलतः व्यक्ति–प्रधान समाज है, जैसे निशिंग जाति। इनका सिद्धांत 'सिर के

बदले सिर' और 'आंख के बदले आंख' है। इनकी दुश्मनी कई वर्षों तक चलती है। यह रसूम या कंपेनसेशन से संतुष्ट नहीं होते। कत्ल के मामले में आर्बिटरी का कार्य बहुत कठिन होता है। इसे कत्ल हुए परिवार के लोग बहुत कम मानते हैं। यद्यपि उसके बदले में बहुत बडी धनराशि दिलाई जाती है। दिबांग वैली के ईदूमिशमी अब प्रशासन के नियमों के अंतर्गत भी चलने लगे हैं। वे 'अब्बाला' कौंसिल के नियमों के अनुसार चलते हैं। दिगारू मिशमी की पंचायत का ढंग आदी जाति की भांति है। मिशमी केबांग में गांव के हर कबीले के एक या दो व्यक्ति उसके सदस्य होते हैं।

शेरदूक्पेन की पंचायत का ढंग मोंपा से कुछ भिन्न है। शेरदुक्पेन सोसाइटी दो भागों में बंटी है– एक रायल एवं दूसरी साधारण श्रेणी। रायल श्रेणी के लोग अपने को तिब्बत के सम्राट जाप्तांग बोरा से संबंधित मानते हैं, जो असंतुष्ट होकर वहां से चले आए थे। उनके साथ आनेवाले दूसरे लोग साधारण श्रेणी के माने गए।

इनकी पंचायत को जंग या जंबा कहते हैं। यह एक लोकतांत्रिक संस्था है जो सर्दियों से चली आ रही है। इसमें गांव बूढा और ग्राम–सदस्य चुने जाते हैं, जिन्हें गांव के परिवारों के वरिष्ठ सदस्य चुनते हैं। अंत में प्रशासन द्वारा इनको स्वीकृति प्रदान की जाती है। ग्राम बूढा और कौंसिल के सदस्य केवल रायल परिवार के लोग ही चुने जाते हैं। इनका कार्यकाल 3 वर्ष का होता है। साधारण श्रेणी के लोग कौंसिल के सदस्यों तक केवल अपने संदेश भेज सकते हैं। वे स्वयं कौंसिल सदस्य नहीं हो सकते ।

शेरदुक्पेन और अका समाज सांमती व्यवस्था से प्रभावित हैं। मोंपा एवं शेरदुक्पेन चीफ, पूर्व राजा के सहायक थे, जिन्हें तवांग का गवर्नर नियुक्त करता था। गवर्नर कई स्थानों पर अपने सहायक तीन वर्ष के लिए नियुक्त करता था। विभिन्न भागों में त्सोरजेन (ग्राम परिषद्) कार्य करती थी। कभी इनमें आपस में विवाद हो जाता था तो सतराजा या तवांग देव अंतिम निर्णय करते थे।

निशी जाति के लोग अपने केंन्द्रीय संगठन की बातें मानते हैं। इनकी कौंसिल आर्बिटरी सिस्टम की होती है। इनकी पंचायत को 'बुंगरेंग बुंगटे' या 'बूरीबूत अयंबो' कहते है। प्राकृतिक आपदाओं या अन्य समस्याओं पर विचार–विमर्श के लिए मीटिंग ऑफ नेले बुलाई जाती है। नेले कोई स्थायी समिति नहीं है। बल्कि आवश्यकता पडने पर आर्बिट्रशन के लिए बना दी जाती है। कत्ल जैसे मामलों का निर्णय भी रसूम और क्षतिपूर्ति के आधार पर तय कर दिया जाता है।

बैंगनी जाति निशिंग जनजाति की ही एक शाखा है, जिसकी अपनी अलग पहचान है। इनकी बस्तियां बिखरी होती हैं। कबीलों के विकास से यह दूर हैं।

आपातानी जाति जीरो पठार पर लगभग 30 वर्ग किलोमीटर क्षेत्र में बसी है। इनकी

बस्ती सटी हुई होती है। इनके प्रमुख सात गांव हैं– रेरू, हरी, हंग, मिसि बामिनम, माडर्न तांगे, दत्ता और हूजा। 'बुलियांग' इस जाति की सभा है जिसमें गांव के सभी कबीलों का प्रतिनिधत्व होता है। इसका एक हेड (मुखिया) होता है, जो गांव में शांति–व्यवस्था कायम रखता है। यह जाति स्वयं अपने मामले तय करती है। यहां तीन प्रकार की बुलियांग है–

1. आखा बुलियांग 2. यापा बुलियांग 3. अजांग बुलियांग

किसी न्यायिक मामले के लिए बुलियांग जिस सार्वजनिक स्थान या मंच पर एकत्र होते है उसे 'लापांग' कहते हैं। इनके सामाजिक नियमों के अनुसार आर्बिट द्वारा निर्णय करते हैं। इनका अधिकार सीमित होता है। बुलियांग अपने कबीले की बातें बताते हैं। यह बिना औपचारिक कार्यवाही के भी निर्णय करते हैं।

आपातानी पहले अपना ग्राम हेड खुद चुन लेते थे, किंतु अब बुलियांग प्रणाली कमजोर हो गई है, इसलिए गांवों को नियंत्रण में रखने के लिए सरकार गांव बूढा की नियुक्ति कर देती है।

खामती समुदाय के मुखिया को समाज में उच्च स्थान प्राप्त है। उसके निर्णय का सम्मान किया जाता है। अपने मुखिया, कौंसिल और अपने कानूनों में खामती लोगों का पूर्ण विश्वास है। चीफ की सहायता एक कौंसिल करती है, जिसके प्रतिनिधित्व का ढंग और चुनाव की अवधि निश्चित है। चीफ कौंसिल, प्रशासन एवं न्याय बौध्द प्रणाली से करते हैं। ये बडे शिष्ट और सुंदर ढंग से निर्णय करते हैं। नोक्टे लोगों का एक राजनीतिक संगठन होता है, जो वरिष्ठ लोगों की कौंसिल कहलाता है। इसकी अध्यक्षता कबीले का सरदार करता है। लोग कौंसिल के सामने अपनी बातें कहते है। वरिष्ठ लोगों की कौंसिल को 'नगोथुन' कहते हैं। कौंसिल युध्द और सिर काटने, शिकार करने, आक्रमण करने, कत्ल करने जैसे मामलों का निर्णय करती है।

नोक्टे गांवो में कुछ बहुत ही शक्तिशाली चीफ हुए हैं, जिन्हें नामसांग, बरदुरिया और लाप्टांग कहते हैं। ये लोग छोटे चीफ द्वारा किये गए निर्णय में संशोधन करने के अधिकारी हैं।

गांव का चीफ 'लोवांग' कहा जाता है। यह कौंसिल की अध्यक्षता करता है। एक और प्रमुख अधिकारी होता है, जिसे 'नगांगबा' कहते हैं। यह चीफ के सलाहाकार या मंत्री की तरह कार्य करता है ं। यह जिलों में त्यौहारों और अन्य समारोहों में भाग लेता है। 'एक रांबा' होता है जो जनसंपर्क अधिकारी का कार्य करता है। वांचू जाति में नोक्टे की तरह ही सरदार होते हैं जो कुछ गांवो पर नियंत्रण रखते हैं। प्रत्येक गांव में वरिष्ठ जनों की एक कौंसिल होती है जिसे 'वांचू–वांचा' कहते हैं। वांचू–वांचा में हर कबीले का व्यक्ति सदस्य होता है। हर गांव की कौंसिल को 'बांधाम' कहते है। इसका वरिष्ठतम सदस्य कौंसिल की अध्यक्षता करता है। चीफ निर्धारित समारोहों की अध्यक्षता करता है।

वांचू जाति में नोक्टे की तरह ही सरदार होते हैं जो कुछ गांवों पर नियंत्रण रखते है। प्रत्येक गांव में वरिष्ठ जनों की एक कौंसिल होती है जिसे 'वांचु –वांचा' कहते हैं वांचू–वांचा में हर कबीले का व्यक्ति सदस्य होता है। हर गांव की कौंसिल को 'बांथाम' कहते हैं। इसका वरिष्ठतम सदस्य कौंसिल की अध्यक्षता करता है। चीफ निर्धारित समारोहों की अध्यक्षता करता है।

नोक्टे समाज की तरह पुजारी, मंत्री, कौंसिलर, कोर्टियर और चौकीदार इनके यहां भी होते हैं। कौंसिल कानून–व्यवस्था को कायम रखती है। कल्याण एवं विकास के कार्य करती है। आपसी झगडे तय करती है। इसका निर्णय अंतिम होता है। गांवों के आपसी झगडों पर कौंसिल विचार करती है। उस पर अपना मत देती है अथवा उसका निर्णय करती है। फिर संबंधित कौंसिलों को सूचना देती दी जाती है। सरदार इसमें बडा शक्तिशाली होता है। कौंसिल चीफ के घर बैठती है। इसमें सदस्य तथा आमंत्रित लोग भाग लेते है।

सिंहफो जाति कई कबीलों अथवा कई उपभागों में बंटी हैं। प्रत्येक भाग चीफ के अंतर्गत आता है। हर चीफ एक–दूसरे से स्वतंत्र होता है। हर चीफ के पास पर्याप्त अधिकार होते हैं। यदि चीफ कमजोर होता है तो कौंसिल ऑफ एल्डर (वरिष्ठ जनों की सभा) उस पर नियंत्रण रखती है। यों तो चीफ सारे अधिकार अपने पास रखता है, किंतु विवादों के मामले में आर्बिट का तरीका इस्तेमाल होता है। इसमें सभी वरिष्ठ सदस्य सहायता करते है। राजनीतिक इकाइयां चीफ को सम्मान प्रदान करती हैं।

तांगसा जाति में भी नोक्टे और वांचू की भांति वरिष्ठ जनों की संगठित कौंसिल होती है, जिसे 'खापुआ', 'खापोंग' और 'खापो' कहते है। कौंसिल का एक नेता चुना जाता है, जिसे 'लुंगवांग नगोआ' या 'लोआंग' कहते हैं। कुछ सदस्य चुने जाते हैं जिनको 'सांगटा' , 'खामडा' और 'देदवा' कहते हैं। ये सभी ग्राम द्वारा चुने जाते हैं फिर सामाजिक स्थिति, बुद्धिमता और आर्थिक स्थिति को देखकर कबीले का एक विशेष नेता चुना जाता है। यह बडा शक्तिशाली होता है और उसका निर्णय अंतिम होता है। कौंसिल सभी विवादों को निपटाती है और शांति – व्यवस्था कायम करती है।

बगुन (खोवा) सिस्टम एक राजनीतिक संगठन है, जिसमें सबसे छोटी इकाई गांव होता है। इसके अंतर्गत गांव हेड होता है। गांव के विचारों के अनुसार, कौंसिल में बात पहुंचाई जाती है। कौंसिल की जिम्मेदारी गांव के विकास और कल्याण – कार्यों को कार्यान्वित करने की होती है। गांव चीफ एवं कौंसिल अधिकारियों पर गांव के विकास और समाज के विकास के लिए प्रयास करने की जिम्मेदारी है।

''प्रमुख जनजाति और उनकी पंचायत''

क्र0सं0	जनजाति	पंचायत का नाम
1	आदी	केबांग
2	अका या हूसो	मिल्ले या राइज या रेज
3	आपातीन	बुलियांग
4	खाम्टी	मेकचूप
5	मिशमी	अब्बाला या के बायो
6	खोंपा	मांगजोबाना या मांगमजोम
7	निशिंग या नीशी	बुंगरेग–बुगंटे या बूरीबूत आयबो
8	नोक्टे	नवोथेम
9	शेरदुक्पेन	जंग
10	सिंहफो	त्रांलग दास या दोषी
11	टगंसा	खापना या खापोंग या खापा
12	वांचू या वांचू–वांचू	वांगचो या वांगसा

(स्त्रोत– डॉयरेक्टर ऑफ इनफारमेशन एण्ड पब्लिक रिलेशन, अरुणाचल डायरी)

निष्कर्ष – इस प्रकार उपरोक्त अध्ययन से यह स्पष्ट होता है कि अरुणाचल की जनजाति समुदाय एक अनुशासन और सामाजिक नियम की परिधि में ही रहकर अपना सम्पूर्ण कार्य का संचालन करती है। प्रदेश की इन जनजातियों के सामाजिक अनुशासन के अनुपालन की जिम्मेदारी पंचायत की ही होती है। अलग–अलग जनजातियों की पंचायत अलग–अलग होती है। जिसे भिन्न–भिन्न नामों से पुकारा जाता है। प्रत्येक जनजाति के अपने रीति–रिवाजों के नियम, अनुशासन परम्परा, कानून के अन्तर्गत ही चलते है। जिस पर गांव के लोगों तथा पंचायत का पूरा अधिकार होता है। जो लोग पंचायत की अवहेलना करने की प्रयास करते है। पंचायत उसका सामाजिक बहिष्कार तक कर देती है। इस प्रकार इस समुदाय में पंचायत की आज्ञा सर्वोपरि होती है। समाज का पूर्णतया अंकुश व्यक्ति तथा परिवार पर होता है।

Reference

1. Chowdhury, J.N. (1990) : "The tribal culture and History of Arunachal Pradesh", Daya Publisher housing, Delhi.
2. Elwin, Verrien (1988) : "Philosophy for Nefa" Government Arunachal Pradesh
3. Jha. S.D. (1995) : "The wealth of Arunachal Pradesh" Mittal Publisher, Delhi.
4. Shukla, Rohit, and Kulkarni, k.m.(1990) : "Forent and tribal life", Ashok Kumar Mittal Concept Publisher company New Delhi.
5. Singh, Sheo Prakash (1996) : "Apatani of Arunachal Pradesh," institute of for rural Eco-Development 234 Daudpur, Gorakhpur
6. अग्रवाल, जी0के. एवं अग्रवाल मीनाक्षी (2006) : ''जनजातीय समाज का समाज शासन साहित्य कवन पहिलशर्स एण्ड डिस्ट्रीब्यूटर्स (प्रा0)लि0 आगरा।
7. उपाध्याय, विजय शंकर एवं शर्मा : भारत की जनजातीय संस्कृति, म.प्र. हिन्दी (1993) ग्रन्थ अकादमी भोपाल
8. पाण्डेय, वीरभद्र (1999) : ''अरुणाचल प्रदेश की जनजातीयो के पर्व–त्यौहार'', अरुणाचल प्रदेश सरकार संचालक, जनसंयोग विभाग, ईटानगर।
9. प्रसाद माता (1995) : ''मनोरम भूमि अरुणाचल'', प्रभात प्रकाशन, चावडी बाजार, दिल्ली–6
10. हसनैन, नदीम (2003) : ''जनजातीय भारत, जवाहर पब्लिशर्स एण्ड डिस्ट्रीब्यूटर्स, नई दिल्ली।

प्रदेश के विकास में उत्तर–प्रदेश राज्य औद्योगिक विकास निगम लिमिटेड की भूमिका

–डॉ0 राकेश कुमार (प्रवक्ता)
श्री जनता इण्टर कालेज,
अजीतमल (औरैया)

उ0प्र0 में औद्योगिक विकास को त्वरित गति प्रदान करने के लिये उ0प्र0 राज्य औद्योगिक विकास लि0 की स्थापना मार्च 1961 में उ0प्र0 शासन द्वारा कम्पनी अधिनियम 1956 के अन्तर्गत की गयी थी। वर्तमान में निगम राज्य शासन में अभिकरण के रूप में प्रदेश के विभिन्न क्षेत्रों में चयनित स्थलों पर अवस्थापन सुविधाओं से युक्त एकीकृत औद्योगिक क्षेत्रों का सर्वांगीण विकास करके औद्योगिक एवं अन्य सम्बन्धित उपयोगी हेतु भूखण्ड उपलब्ध कराता है।

निगम प्रदेश के तीव्र सर्वांगीण औद्योगिक विकास के लिये मुख्य रूप से निम्न कार्यों को सम्पादित कर रहा है।

1. प्रदेश के विभिन्न क्षेत्रों में अवस्थापन सुविधाओं से युक्त एकीकृत औद्योगिक नगरी एवं औद्योगिक क्षेत्रों का विकास करके औद्योगिक एवं अन्य सम्बन्धित उपयोगों हेतु भूखण्ड/भवन उपलब्ध कराना।
2. औद्योगिक अवस्थापना सुविधाओं के विकास एवं इसमें निजि क्षेत्र की भागीदारी सुनिश्चित कराने के लिये नोडल संस्था के रुप में कार्य करना।
3. सार्वजनिक/अर्द्ध सार्वजनिक संस्थानों के लिये निर्माण कार्य संचय आधार पर सम्पादित करना।
4. बडे उद्योगों/अवस्थापना परियोजानओं हेतु भूमि अधिग्रहण औद्योगिक इकाई की स्थापना के लिये भूमि की सर्वप्रथम अपरिहार्य आवश्यकता होती है। उद्यमियों को उचित दर पर नियोजित औद्योगिक क्षेत्रों में भूमि उपलब्ध कराने का दायित्व निगम का है। निगम द्वारा औद्योगिक क्षेत्र योजना कि अधीन सड़क, नाली, विद्युत लाइनें तथा अन्य प्राथमिक/सहायक अवस्थापना सुविधाओं से युक्त विभिन्न आकारों के विकसित भूखण्ड उद्यमियों को 90 वर्ष के पट्टे पर आबंटित किये जाते है।

निगम की प्रमुख परियोजनायें

ग्रोथ सेंन्टर्स परियोजनायें :– निगम द्वारा प्रदेश में जैनपुर, शाहजहांपुर, दिबियापुर एवं झाँसी ग्रोथ सेन्टर्स का विकास क्रमशः 331 एकड़, 324 एकड़, 346 एकड़ एवं 385.04 एकड़

भूमि पर किया गया। इनकी परियोजना लागत क्रमशः रु0 3100.76 लाख, रु0 1622 लाख एवं रु0 1885 लाख है। इन ग्रोथ सेन्टर्स परियोजनाओं में जैनपुर तथा शाहजहांपुर का विकास कार्य पूर्ण हो चुका है। झाँसी एवं दिबियापुर विकास केन्द्रों का कार्य प्रगति पर है।

एग्रो पार्कस :— खाद्य प्रसंस्करण उद्योग मंत्रालय, भारत सरकार के सहयोग से कृशि आधारित उद्योगों को बढावा देने हेतु निगम द्वारा कुर्सी रोड (बाराबंकी) तथा करखियांव (वाराणसी) में दो एग्रो पार्कें में अवस्थापना सुविधाओं के विकास हेतु क्रमशः रु0 1314.53 लाख रु0 1417.03 लाख व्यय किये जा चुके हैं। दोनों एग्रो पार्कों का विकास कार्य पूर्ण हो चुका है।

विशेष आर्थिक जोन (Spucial Economic Zone) कानपुर :— विशेष आर्थिक परिक्षेत्र परियोजनाओं को सिंगल प्रोडक्ट के रुप में शासन के निर्देशानुसार UPSIDC द्वारा विकासकर्ता की भूमिका अदा करते हुए कानपुर के तीन सेक्टर स्पेसिफिक परियोजनाऐं विकसित की जानी है। उक्त परियोजना पर बोर्ड ऑफ एप्रूवल, भारत सरकार द्वारा दिनांक 31.05.2007 को अनुमोदन प्रदान किया गया है।

विशेष आर्थिक जोन (Spucial Economic Zone) भदोही :— भदोही विशेष आर्थिक परिक्षेत्र परियोजना को सेक्टर स्पेसिफिक परियोजना (कारपेट उत्पादक) के रूप में यू0पी0एस0आई0डी0सी0 द्वारा विकासकर्ता की भूमिका अदा करते हुए विकसित किये जाना है। इस परियोजना पर एप्रूवल, भारत सरकार द्वारा जून 2008 में औपचारिक अनुमोदन प्रदान कर दिया गया है। भूमि का वास्तविक कब्जा प्राप्त कर विकास कार्य प्रारम्भ करने में स्थानिय कास्तकरों द्वारा विरोध किया जा रहा है। जिला प्रशासन के सहयोग भौतिक कब्जा प्राप्त करने का प्रयास किया जा रहा है।

विशेष आर्थिक जोन (Spucial Economic Zone) मुरादाबाद :— मुरादाबाद में हस्तनिर्मित वस्तुओं के लिये विशेष आर्थिक परिक्षेत्र स्थापित करने हेतु भारत सरकार से अनुमोदित इस परियोजना में उ0प्र0 राज्य औद्योगिक विकास निगम द्वारा जल, विद्युत, जल निकासी, सामान्य सुविधायें, इन्लैण्ड कन्टेनर डिपो, विकास आयुक्त कार्यालय, कस्टम कार्यालय, बैंक, पोस्ट—ऑफिस, टेलीफोन, पुलिस आउट पोस्ट, फायर स्टेशन, बाउन्ड्री बाल, आवसीय क्षेत्र, प्राथमिक चिकित्सा केन्द्र आदि सुविधाओं का निर्माण। विकास कार्य लगभग पूर्ण हो चुका है। उद्यमियों को भू—आवटंन की प्रक्रिया जारी है।

औद्योगिक अवस्थापन उच्चीकरण योजना (औद्योगिक क्लस्टर योजना) :— निगम के चार औद्योगिक क्षेत्रों (गाजियाबाद—2, बुलन्दशहर एव कानपुर) में अवस्थापन सुविधाओं के उच्चीकरण हेतु परियोजनायें भी राज्य सरकार की संस्तुति सहित भारत सरकार के अनुमोदन हेतु प्रेषित की गई है। इसके अतिरिक्त मेरठ कलस्टर हेतु भी एक परियोजना रिपोर्ट तैयार की गयी है।

एकीकृत अवस्थापन विकास केन्द्र (आई0आई0डी0सी0) :– इस योजना के अन्तर्गत यू0पी0एस0आई0डी0सी0 द्वारा उत्तर प्रदेश के पिछडे जनपदों में लघु–उद्योग स्थापित किये जाने हेतु कोसी–कोटवन (मथुरा) एटा, वन्थर (उन्नाव) में परियोजनायें स्थापित किये जाने हेतु भारत सरकार उद्योग मंत्रालय द्वारा वर्ष 1996– 97 में स्वीकृति प्रदान की गयी थी। एवं इन परियोजनाओं का विकास कार्य पूर्ण हो चुका है। सम्बन्धित केन्द्रों में उद्यमियों को अवस्थापना सुविधायें प्रदान करते हुये 200 मीटर एवं 300 मीटर में भू–खण्डों को उपलब्ध कराया गया है।

उ0प्र0 राज्य औद्योगिक विकास प्राधिकरण :– निगम द्वारा विकसित औद्योगिक क्षेत्रों के विकास, प्रबन्धन, रख–रखाव का निर्धारण, मास्टर प्लान व विकास योजनायें बनाने, स्वीकृत भू–उपयोग के अनुश्रवण व कराधान हेतु शासन के नोटिफिकेशन संख्या 1418/77–2001–267 या /97 टी.सी. –1 दिनांक 5 सितम्बर 2001 द्वारा अभिज्ञापित कर दिया गया है। तथा निगम के अध्यक्ष को पदेन प्राधिकरण का अध्यक्ष भी नामित किया गया है।

आई0टी0 विशेष आर्थिक परिक्षेत्र ट्रोनिका सिटी :– उ0प्र0 राज्य औद्योगिक विकास निगम लि0 द्वारा विकसित ट्रोनिका सिटी में लगभग 27.13 एकड़ भखण्ड पर आई0टी0/आई0टी0एस0एस0ई0जेड0 विकसित करने को परियोजना पर भारत सरकार द्वारा जून 2008 में अनुमोदन प्रदान कर दिया गया है।

औद्योगिक इकाई की स्थापना के लिये उद्यमियों को उचित दर पर नियोजित औद्योगिक क्षेत्रों में उपलब्ध भूमि को उद्यमियों को नितिगत व्यवस्था के अन्तर्गत सौंपी जाती है। उक्त योजना में निम्न लिखित उद्देश्यों की पूर्ति में योगदान मिला है।

1. उद्यमियों को उचित दरों पर औद्योगिक भू–खण्ड उपलब्ध कराना।
2. प्रदेश के विभिन्न क्षेत्रों में औद्योगिक संभाव्यता का कुशलतम दोहन।
3. प्रदेश के विभिन्न क्षेत्रों का सामान्य व सन्तुलित औद्योगिक विकास।

प्रदेश में सन्तुलित औद्योगिक एवं आर्थिक विकास के उद्देश्य को ध्यान में रखते हुये पिछडे एवं उद्योग शून्य जनपदों में औद्योगिक क्षेत्र स्थापित करने पर समुचित बल दिया है। बदलते आर्थिक/औद्योगिक परिवेश में मांग आधारित औद्योगिक क्षेत्रों के विकास को प्राथमिकता दी जा रही है। स्रोत :– उत्तर–प्रदेश में औद्योगिक विकास (प्रगति समीक्षा 2010–11) उद्योग निदेशालय, कानपुर (उत्तर–प्रदेश)। पृष्ठ सं0 – 107, 108

1. उत्तर–प्रदेश में औद्योगिक विकास (प्रगति समीक्षा 2009–10) उद्योग निदेशालय, कानपुर (उत्तर–प्रदेश)। पृष्ठ सं0 125, 127, 129
2. उत्तर–प्रदेश 2010, सूचना एवं जनसम्पर्क विभाग उत्तर–प्रदेश पृष्ठ सं0 171, 172
3. उत्तर–प्रदेश 2009, सूचना एवं जनसम्पर्क विभाग उत्तर–प्रदेश पृष्ठ सं0 869, 870
4. डा0 एच0के0सिंह व डा0 मीरासिंह : व्यवसायिक वित्त, प्रयाग पुस्तक भवन इलाहाबाद (संस्करण 2011) पृष्ठ सं0 385

उ0 प्र0 सरकार की सर्वजन हिताय नीति का मूल्याकन

डॉ0 अर्चना गुप्ता
प्रवक्ता
राजनीति विज्ञान
डी0ए0वी0 कालेज, कानपुर

डॉ0 प्रतिमा सक्सेना
प्रवक्ता
राजनीति विज्ञान
डी0ए0वी0 कालेज, कानपुर

26 जनवरी 1950 को देश में गणतन्त्र की स्थापना के साथ समूचे राष्ट्र ने कामना की थी कि हम जिस समाज की रचना करने जा रहे हैं, वह हर प्रकार के शोषणों से मुक्त न्याय पर आधारित हो। इसका उद्‌देश्य समाज में फैले जातिभेद, वर्णभेद व वर्गभेद को मिटाया जाए तथा मनुष्य–मनुष्य के बीच की दूरी को कम करके परस्पर समता, भ्रातत्व और सहयोग की भावना का विकास किया जाए। इसके लिए संविधान में मूलाधिकारों एवं उनकी रक्षा की व्यवस्था की गई। यद्यपि हमारा संविधान गरीब व उपेक्षित तबके के लोगों को समाज की मुख्य धारा में शामिल होने और उन्हें प्रगति के अवसर प्रदान करता है। लेकिन सामान्यतया सरकार व राजनेता इसके लिए प्रयास नहीं करते। समाज से भी उपेक्षित सहयोग नहीं मिलता। बहुआयामी एवं विराट व्यक्तित्व के धनी अम्बेडकर इस मार्ग में जाति व्यवस्था को सबसे बड़ा अवरोध मानते थे। इसीलिए वे जाति विहीन एवं वर्ग विहीन समाज की स्थापना चाहते थे जिसमें सबके लिए समान अधिकार एवं अवसर विद्यमान हों। वास्तव में सभी वर्गों व सम्प्रदायों को साथ लेकर एकता के मार्ग पर चलना ही सर्वहित में है। संविधान के अनुच्छेद 38 में राज्य के नीति निर्देशक तत्वों में कहा गया कि राज्य लोक कल्याण की अभिवृद्धि के लिए सामाजिक व्यवस्था बनाएगा तथा असमानता को कम करने का प्रयास करेगा। संविधान की इसी मूल भावना का समावेश करते हुए उत्तर प्रदेश शासन द्वारा आरक्षण नीति के सम्बन्ध में 26 अगस्त 1950 को प्रथम शासनादेश जारी किया गया। सरकार द्वारा सार्वजनिक सेवाओं में दलित व पिछड़े वर्ग के आरक्षण का उद्‌देश्य न केवल रोजगार के अवसर और सेवाओं में उनका प्रतिनिधित्व बढ़ाना है वरन् उन्हें सामाजिक व शैक्षणिक रूप से उन्नत कर सम्मानित स्थान दिलाना है। आज उत्तर प्रदेश की मायावती सरकार सर्वजन हिताय नीति के तहत हर वर्ग हर क्षेत्र की गरीबी दूर करने के संकल्प को प्राथमिकता से पालन कर रही है। सरकार ने विकास की गतिविधियों को भी गति दी है। इनमें जहां गरीबी व बेरोजगारी दूर करने के अनेक कार्यक्रम हैं वही आवास, समाज कल्याण एवं अन्य कल्याणकारी योजनाएँ भी हैं जो प्रदेश में जन–जन में खुशहाली का सन्देश देती है।

सामाजिक सन्दर्भ में देखें तो दलित का अर्थ किसी सबल द्वारा निर्बल को उसके मानवीय अधिकारों से वंचित रखना है। अस्तित्व के संघर्ष में सबल निर्बल को परास्त करके उसके अधिकारों पर अपना नियन्त्रण करने का सदैव प्रयास करता रहा है तथा निर्बल अपनी रक्षा के लिए सतत् संघर्षशील रहता है। इसी को अस्तित्व के लिए संघर्ष एवं योग्यतम की जीवितता का सिद्धान्त कहते हैं। सदियों से सामाजिक, सांस्कृतिक, धार्मिक एवं मनोवैज्ञानिक स्तर पर शोषित एवं उत्पीड़ित दलितों के उत्थान के लिए भगवान बुद्ध, संत कबीर, संत रैदास,

संत नानक देव आदि अनेक विद्वान मनीषियों ने इनके त्रासद जीवन को समरस बनाने का प्रयास किया, जिसमें इन्हें एक सीमा तक सफलता भी प्राप्त हुई किन्तु प्रभुत्व सम्पन्न तथाकथित उच्चवर्गीय असमाजिक तत्वों के कुचक्रों से ऐसे समस्त प्रयास समय के साथ मन्द पड़ते गए। दलित एवं समग्र राष्ट्रीय समाज के समुचित विकास के लिए आवश्यक है कि उन्हें शिक्षा, संस्तुति, संस्कार, स्वास्थ्य एवं आर्थिक निर्भरता की दृष्टि से एक प्रगतिशील स्वस्थ समाजिक परिवेश उपलब्ध हो। विशेषकर दलितों एवं निर्बलों के लिए यह दायित्व शेष समाज का है जिससे समाज में सभी को प्रगति एवं विकास का स्वाभाविक एवं नैसर्गिक अवसर प्राप्त हो सके। देश के आर्थिक ढांचे को सुधारने के लिए गांधी जी ने ट्रस्टीशिप का विचार प्रस्तुत किया किन्तु वह सार्थक नहीं हो सका। आचार्य विनोबा भावे का भूदान आन्दोलन भी असफल सिद्ध हुआ। इसके अतिरिक्त अन्त्योदय, सर्वोदय आदि अनेक आन्दोलन प्रकाश में आए किन्तु सफल नहीं हो सके। स्वामी दयानन्द, राजा राममोहन रॉय, गोखले, गांधी, अम्बेडकर, ज्योतिबाफुले, काशीराम आदि प्रभृति चिन्तकों एवं विचारकों से पुनः ऊर्जा प्राप्त कर मायावती सरकार विभिन्न कल्याणकारी योजनाओं के द्वारा सामाजिक समरसता स्थापना हेतु प्रयास कर रही है। किन्तु किन्हीं क्षेत्रों में प्रदेश सरकार की सर्वजन हिताय एवं सर्वजन सुखाय की नीति भ्रामक भी सिद्ध हो रही है। प्रोन्नति में आरक्षण के प्रश्न पर उनकी नीति में वर्ग विशेष के प्रति रूझान परिलक्षित होता है। जिस पर उच्च न्यायालय में भी तीखी टिप्पणी की जा चुकी है। उनकी इन नीतियों के कारण अन्य वर्गों में असन्तोष स्वाभाविक है। ऐसे में सरकारी नीतियों में सुधार की आवश्यकता है।

जातिवाद, भाषावाद, सम्प्रदायवाद, धार्मिक उन्माद, नक्सलवाद एवं माओवाद जहाँ हमारे एकीकरण के भाव को ठोस आधार पहुंचा रहे हैं वहीं भ्रष्टाचार, आतंकवाद, हिंसा एवं ईर्ष्या भारतीय मूल्यों को तार–तार कर रही हैं। एक ओर सूखा, महंगाई, शिक्षा, स्वास्थ्य एवं बेरोजगारी जैसी चुनौतियाँ भारतीय शासन व्यवस्था को झकझोर रही हैं वहीं दूसरी ओर व्यक्ति आपराधिक गतिविधियों, बलात्कार एवं हिंसा जन्य समाज में अपने अस्तित्व को लेकर चिन्तित है। राजनीतिक व्यवस्था भी सभी वर्गों को बांटने एवं अपना वोट बैंक सुदृढ़ करने का काम कर रही है। इसीलिए आज 6 दशक बाद भी स्थिति में कोई उत्साहजनक सुधार नहीं हुआ है। शोषण, असमानता, अराजकता एवं दरिद्रता बढ़ी है गरीब और गरीब एवं अमीर पहले से अधिक अमीर हुआ है। योजना आयोग की रिपोर्ट के अनुसार देश के लगभग दस लाख व्यक्ति ऐसे हैं जिन्हें एक समय के लिए भर पेट भोजन नहीं मिलता।

वास्तव में जब तक समाज के सभी वर्गो विशेषकर दलित एवं उपेक्षित वर्ग को समानता एवं स्वतन्त्रता का दर्जा प्राप्त नहीं होता तब तक देश की स्वतन्त्रता एवं विकास दर दिखाने वाले सारे आंकड़े बेमानी है। देश एवं प्रदेश के समग्र विकास हेतु सर्वजन हिताय नीति का सैद्धान्तिक पक्ष ही नही वरन् उसे व्यवहार में सरकारी नीतियों में शामिल करना होगा। साथ ही मनुष्य द्वारा मनुष्य के शोषण को समाप्त कर हर व्यक्ति को समता एवं स्वतन्त्रता का दर्जा प्रदान करना होगा। इसके लिए आवश्यक है कि सत्ता में हर वर्ग की भागीदारी हो, तभी सबके हितों की रक्षा एवं सबके साथ न्याय हो सकेगा। अस्तु विभेद, अनेकता और असमानता की समाप्ति एवं सर्वजन हिताय का आदर्श राष्ट्रवाद के विकास की अनिवार्य शर्त है।

COMPARISON OF PHYSIOLOGICAL FITNESS LEVEL BETWEEN UNDER-GRADUATE AND POST-GRADUATE STUDENTS OF PHYSICAL EDUCATION

-Mrs. Ruchi Yadav
Research Scholar,
C. M. J. University,
Shillong, Meghalaya

INTRODUCTION

The human body is a complex machine. The sophisticated mechanism of our body has attracted scientists to probe into its complex nature. With the advancement of technology, numerous sophisticated instruments have been developed to enable scientists to gain further insight into the functioning of human body. Inspite of extensive inventions and discoveries, there still exists tremendous demand on scientists to obtain appropriate answers to certain queries about the mechanism of the human body. It therefore becomes apparent to understand the relevant changes that occurs during rest or when the body is exposed to different intensities of physical activity. We may feel that we aren't working while lying or reading a book or while sleeping. In fact, it is not true. Even during such phases physiologically our body is quite active. If such is the condition during resting phases then imagine the degree to which our systems have to cooperate when the body engages in rigorous physical activity or training programmes. Higher the rate of physical activity or longer its duration, more is our muscles physiologically active. Therefore, exploring how the body responds to different intensities of physical activity becomes a comprehensive aspect of exercise physiology.

Physiological aspect deals with the function of living organism and their parts. And exercise physiology is science that elucidates how the human body functions reacts, adjusts and adapts when exposed to varied degrees of physical activity or training.

Furthermore, exercise physiology assists in scientifically constructing and implementing exercise training for various programmes categories of people who are involved in competitive sports or those interested in acquiring optimal fitness to accomplish high performance in competitive sports, it is essential that the trainer posses the knowledge of exercise physiology. This assists them to yield fruitful results from their athletes. It also helps in designing and managing rehabilitative programmes for those suffering from various health disorders. More over, sedentary class of people can be motivated to lead a positive and healthier life style. Thus whether it is selection of potential sports person, sports team or

creating an awareness of fitness among masses, the knowledge of exercise physiology serves everyone thereby contributing to the concept of "Fit People, Fit Nation."

The individual can actively perform an activity only if he is physiologically fit. Human performance is directly related to the physiological system and organ functions sustain the particular activity in all the individuals. Physiological fitness implies that all the physiological system of the body, abdominal, muscular, circulatory, respiratory, nervous and glandular etc. should function efficiently to perform different strenuous activities.

Physiological fitness means:

1. Speed or capacity to move a limb or body part with the greatest possible velocity.
2. Existence of proper neuro–muscular co-ordination and skills.
3. Stamina to meet needs of strenuous activities.
4. Proper growth and development of body organs
5. Possession of proper strength to do required activities without undue strain.

Physiological systems of the body have great capacity to adjust to the loads of regular exercise or training. we can improve our physiological fitness through proper training techniques.

STATEMENT OF THE PROBLEM

The purpose of the study was to compare the physiological fitness level of undergraduate and postgraduate male students of the Department of Physical Education.

DELIMITATION

1. Female undergraduate students and postgraduate students of the Department of Physical Education, V.S.S.D. College were taken for the study.
2. Students between 18 to 28 years of age were taken for the study.
3. Students of B.P.Ed and M.P.Ed. were taken for the study.
4. The Following Physiological Components were selected:

a)	Blood Pressure	-	Sphygmomanometer
b)	Vital Capacity	-	Dry Spiro meter
c)	Cardiovascular Endurance	-	Harvard Step Test (long form)
d)	Heart rate	-	Total No. of beats/minutes through
e)	Oral Body Temperature	-	Thermometer

LIMITATION

Factors which could not be controlled for the study were as Follows:

1. Environmental factors-climatic conditions were not the same.
2. Their daily routine was not the same; all the subjects were not the hostlers and some of them used to come from home by covering distance through bicycle so it was considered one of the limitations of the study.
3. Their playing level-economic status.

HYPOTHESIS

There would be no significant differences between the Physiological fitness of under-graduate and post-graduate students of Physical Education.

DEFINITION AND EXPLANATION OF TERMS

1. Blood Pressure: The maximum pressure exerted by the blood on the walls of blood vessels is called Blood Pressure.
2. Vital Capacity: “The volume of air that can be moved out of the lungs after maximum inspiration is called vital capacity”.
3. Cardiovascular Endurance: Cardiovascular endurance is the ability of the circulatory and respiratory systems to adjust and recover from the effects of exercise or work. The ability of the heart and lungs in supplying maximum oxygen through the blood to the active tissues during long duration exercise.
4. Heart Rate: Number of heart – beats in a unit time (one-minute) is called heart rate.
5. Oral Body Temperature: The normal body temperature of subjects. It is measured by the thermometer. The normal body temperature of human body is 98.4 ^{o}F or 36.9 ^{o}C.

SELECTION OF THE SUBJECTS

Thirty students of B.P.Ed. and M.P.Ed. (fifteen each) were selected for the purpose of this study as subjects.

SELECTION OF THE VARIABLES

For this study the following physiological variables were considered important, which have already been tested by several expects and are justifiable and feasible in administration.

1.	Vital Capacity	-	measured in ml.
2.	Blood Pressure	-	measured in mm Hg.
3.	Cardiovascular Endurance	-	Hardward step test (Long form)
4.	Heart rate	-	Stethoscope
5.	Oral Body Temperature	-	Thermometer

STATISTICAL PROCEDURE

As it was a comparative type of study of two groups (undergraduate and postgraduate), therefore 't' test was applied to find out the physiological differences and level of significance was set at .05 level.

Mean and standard deviation of physiological fitness variables of post-graduate and undergraduate students are given in tables I and table II

Table I

Mean and standard Deviation of Physiological Fitness Variables of Under Graduates

S. No.	Variables	Mean	S.D.
1.	Vital Capacity (liters)	2.58	.23
2.	Blood Pressure (mm Hg)	89.16	4.11
3.	Cardiovascular Endurance	88.8	5.15
4.	Heart Rate (beat/ min.)	73.21	4.21
5.	Oral Body Temperature	96.46	1.58

Table II

Mean and standard Deviation of Physiological Fitness Variables of Post Graduates

S. No.	Variables	Mean	S.D.
1.	Vital Capacity (liters)	2.60	.33
2.	Blood Pressure (mm Hg)	79.17	12.1
3.	Cardiovascular Endurance	85.2	11.67
4.	Heart Rate (beat/ min.)	73.20	5.71
5.	Oral Body Temperature (°F)	96.66	1.05

Mean difference, standard error and 't' ratio of physiological fitness variables of undergraduate and postgraduate students are given in Table III and as whole group in table IV.

Table III

Significance of Difference of Means in selected Physiological Fitness variables of Under Graduate and postgraduate students

S. No.	Variables	Mean Difference	Standard Error	t- ratio
1.	Vital Capacity (liters)	3.7	1.47	2.52*
2.	Blood Pressure (mm Hg)	2.65	2.68	.97
3.	Cardiovascular Endurance	2.88	1.2	2.59*
4.	Heart Rate (beat/ min.)	1.55	1.46	1.06
5.	Oral Body Temperature (°F)	1.49	2.35	.57

*Significant at .05 level of confidence 't' value to be needed at .05 level of confidence with 28 degree of freedom is 2.05.

Table IV

Significance of Difference of Means in Selected Physiological Variables (as a Whole Group) of Under Graduate and Postgraduate Students

S. No.	Group	Mean Difference	Standard Error	t-ratio
1	Whole group	5.1	5.37	.97

*Significant at .05 level of confidence 't' value to be needed at .05 level of confidence with 28 degree of freedom is 2.05.

FINDINGS

It is revealed form the Table – I and II that mean vital capacity (M = 2.60) was better in post graduate students as compared to undergraduate (M = 2.58). But on the other hand mean cardiovascular endurance (M =88.8) of undergraduate student was better than postgraduate students (M = 85.2).

Table III shows significant difference in vital capacity (t = 2.52) and in cardiovascular endurance (t =2.59)

Table IV reveals that there was no significant difference in physiological variables of

under graduate and post graduate students when compared as a whole group.

There was no significant difference in blood Pressure (t = .97), heart rate (t = 1.06) and in oral body temperature (t = .57) as shown in table III.

DISCUSSION ON THE FINDINGS

After analyzing the data there was no significant difference found in selected physiological variables such as blood pressure, heart rate and oral body temperature. But in vital capacity and in cardiovascular endurance there was significant difference while comparing the undergraduate and post graduate students.

Postgraduate students were found little better in vital capacity than undergraduate students of the same department. This may be due to the involvement in some short of yogic activities such as pranayam which needs inhalation and exhalation of air and this might have improved their ventilatory efficiency.

Undergraduate students were found better in cardiovascular endurance than postgraduate students. So it may be attributed to the fact that they were undergoing regular training programme as compared to postgraduate students or it may be because some of the students were used to come by bicycles to attend the test might have improved the cardiovascular endurance.

Therefore, it is inferred that there was significant difference in two variables and in three physiological variables, significant difference was not found. Hence, Hypothesis of this study was rejected.

References:

1) Tiwari, Sandhya, "Exercise Physiology" New Delhi: Sports Publication, p.1.
2) Mathews K. Donald, "Measurement in Physical Education" Published in1993.
3) Fox Edward L., Richard W. and M. L. Foss, "The Physiological basis of exercise and sports, published in 1993.
4) Kansal D.K." Test and Measurement in sports and Physical Education, D.V.S. Publication, New Delhi. Etc.

RIGHT TO INFORMATION AND GOOD GOVERNANCE

-Pawan Kumar Tiwari
Research Scholar, Law
C. M. J. University,
Shillong, Meghalaya

Good Governance and Right to Information are complimentary and the success of one depends upon the other. There are large number of problems in the Indian Administration which goes un-noticed and the administration rather than changing continues in its grooves. Right to Information Act, 2005 would make the civil servants alert to provide the information to public challenges and as a bye-product would make administration responsive and transparent which mean good governance.

The cherished aim of all Government, whatever its form or level, has always been the service of the people and governance of the people to their entire satisfaction. Good Government is the bedrock of our stability. there is increasing emphasis on development with participatory democracy meaning thereby that needs and aspirations receive adequate attention of those who finally decide and act for the welfare and all round development of the people.

We are wedded to the concept of welfare State which has led to tremendous increase in the number and varieties of governmental activities. the governmental administration today is called upon to manage the entire affairs of the socio-economic life of the people. The enormous expansion of public service has led to the expansion of bureaucracy. This has also resulted in the multiplication of the administrative processes where by administrative powers and discretions are vested at different levels of the executives. It cannot be denied that where there are powers and discretion, there is always the possibility of their abuse in the form of maladministration and corruption. Despite its dangers, we cannot eliminate discretion from administration. What is therefore, necessary is to devise adequate methods of control the exercise of discretion so that the chances of maladministration and corruption arising out of its misuse are considerably reduced.

Secrecy in Government and Government run institutions is a source of harassment and corruption. Right to Information is basic and most essential for democracy to ensure people's participation and transparent administration. Today, there is a dichotomy between Public Administration and citizens. Why? It is argued by persons in Governments that the people are illiterate, apathetic and uninterested which is totally based on false premises.

Even the educated people having rights are denied information and thus block their participation. Let me illustrate with some views of experts.

World Bank feels that Right to Information is an integral part of Good Governance. World Bank has identified the following characteristics of good governance as : political accountability; availability of freedom; law abiding citizens and people in power; bureaucratic accountability; transparency; availability of information; effectiveness; efficiency; and cooperation between government and society.

His Excellency Dr. A.P.J. Abdul Kalam, President of India observes that Good governance is being recognized as an important goal by many countries across the world. They have taken up specific initiatives for open government. Freedom of information is being redefined and supported by detailed guidelines. The Internet revolution has proved to be a powerful tool for good governance initiatives and the world is moving towards Internet governance. An important dimension of the Internet potential is the possibility of providing services any time any where. Along with this there is a conscious effort to put the citizen as the center of focus of the governance. Citizens are being perceived as customers and clients. E-governance has to be citizen-friendly. Delivery of services to citizens is considered as a primary function of the government. Particularly in a democratic nation of a billion people like India e-Governance should enable seamless access to information and seamless flow of information across the state and central government in the federal setup.

Prabhat Kumar feels that Right to Information is an integral part of Good Governance. To quote him : "Government is very sensitive to this expectation of the people and sincere efforts in this direction have already been initiated. Good governance is an overarching component of the agenda of our Government which has taken measures to make administration accountable, responsive and transparent through : (a) citizen character of Signify the visible commitment for quality service and attention to grievance; (b) review of administrative laws and regulations for dismantling procedures and red tape by repeal or amendment of outdated and obsolescent laws, regulations and procedures that mystify and confuse the people, (c) creating the environment to reap the benefits of IT by harnessing IT, (d) setting up of Information and Facilitation Counters, and (e) formulation of a freedom of Information Bill[1].

B.B. Tandon is of the view that Right to Information would promote Good Governance. To quote him[2]. We are now on the threshold of the twenty-first century. In the new millennium, above all, the government would need to re-invent itself to become citizen-centric and citizen-friendly. It would need to limit its role to core functions such as security, law and order, social services, creation of infrastructure and macro-economic management. Greater delegation and decentralization of authority and responsibilities would need to be

introduced at all levels. A combination of citizen's charters and the Right to Information would ensure greater accountability in the administrative systems. The process of consultation with the participation of citizens in decision-making would gradually become more pronounced in order to ensure accountability. At the same time, good citizenry would also need to be emphasized for all round development of the society. Besides enjoying their rights, the citizens would need to behave responsibly and perform their duties to the state. Clearly defined ethical standards would also need to be adopted by the civil servants as well as politicians. In order to achieve all this, innovative use of information technology would be critical.

V.K. Agnihotri and B.V.R. Subrahmanyam think that Right to Information is an essential ingredient of Good Governance. To quote[3] : The minimum expectation of the citizens is for :

- Timely prompt service,
- Minimum Red Tape,
- Minimum Waiting Time,
- Minimum visits to multiple officers,
- Minimisation of Arbitrariness,
- Prompt information in Delays, waiting times, etc., and
- Prompt Information on status of Application.

These are standards which service firms too expect their staff to maintain so that they have satisfied customers. It would not be wrong to predict that governments which strive to attain higher and higher standards in the above expectation will be rated higher by the public with consequent benefits to the Government of the Day.

O.P. Dwivedi and D.S. Mishra, “A Good Governance Model for India: Search from Within”, in IJPA, Oct.-Dec., 2005 feel that good governance refers not only to the government but also to all the players involved in the process of governance, namely, all five organs discussed earlier. Accountability, incorruptibility, sensitivity and ethical conduct are the key factors of good governance. Who is accountable to whom varies depending on whether decisions or actions taken are internal or external to an organization or institution. As a fundamental principle, various instruments of governance are accountable to those who will be directly or indirectly affected by the decisions or actions. Transparency and rule of law are prerequisites for ensuring accountability. Moral or ethical behavior is essential for sustainability of the dynamic relationship formed during the conduct of the governance. A good example of this is the Biblical teaching, do not 'do undo others what you would not have others do unto you'. This simple, universal principle is as valid for the institutions or groups as it is for the individuals. Incorruptibility requires clean conscience and keeping the public

good above the private. This is more pertinent in the resource starved developing world, where corruption further impoverishes the state, impacting the poorest of the poor.

The author had been a member of University Grants Commission, a Statutory Body Created under the Act of Parliament, 1956. The author during this period was not provided 80 percent of the information on the work carried out by the U.G.C. On asking as to who have been nominated as experts on behalf of U.G.C. on the panels of different Universities to select Vice-Chancellors, the Chairman never disclosed their names. In this way there is a complaint that 80 percent Vice-Chancellors are not selected on merit which is due to secrecy involved in the matter. My wife Dr. Aruna Goel who had also been Member of U.G.C. and worked as Chairperson for Women Studies ion different Universities was never given the information about the opening of Women Study Centres.

Similarly, Members of Board of Directors, Members of Senate and Syndicate in the Universities are not provided information by the Vice-Chancellors to keep his Supremacy. Even the Members of Parliament are not provided with true information. Thus, this is not the case with the general public but also with persons holding important positions.

All the malpractices in administrations would be exposed by the right to information and there would be no alternative left except to run the administration through Good Governance.

On the other hand, Good Governance would automatically solve the problems of right to information. The administration where good governance is in vogue, there would be very few cases of Right to Information. The need of Right to Information would arise only from the organization which are not well managed.

In the words of Prof. Manmohan Singh, the Prime Minister of India: "Efficient and effective institutions are the key to the rapid economic and social development, institutions which can translate promises into policies and actionable programmes with the least possible cost and with maximum efficiency; institutions which can deliver on the promise made and convert. Outlays into outcomes. For institutions to be effective they must function in a transparent, responsible and accountable manner. The Right to Information Bill will bring into force another right which will empower the citizens in this regard and ensure that our institutions and the functionaries discharge their duties in the desired manner. It will bring into effect a critical right for enforcing other rights and fill a vital gap in a citizen's framework of rights."

In the past, the emphasis was on Secrecy, The Central and State Civil Services (Conduct) Rules prohibit unauthorized communication of information to any one. The conduct rules provide: "No government servant shall, except in accordance with any general or special order of the Government or in the performance in good faith of the duties assigned

to him, communicate directly or indirectly, any official document or any part thereof or information to any Government servant or any other person to whom he is not authorized to communicate such documents/information." The Government servants kept everything secret.

The Shouries Committee examined this issue and stated as follows: "There is a widespread feeling that the Central Civil Services (Conduct) Rules, 1964, and corresponding rules applicable to Railways, Foreign Services and All India Services, inhibit Government servants from sharing information with public. The accent in the rules is to denial of information to public. Situation has obviously to change if freedom of Informations Act is to serve its purpose and if transparency is to be brought about in the system."

Shourie Administrative Reforms Commission, desired Civil Services Rules of all states may be changed on the following lines to make Government more open.

Communication of Official Information: "Every Government servant shall, in performance of his duties in good faith, communicate to a member of public or any organization full and accurate information, which can be disclosed under the Right to Information Act, 2005."

Explanation : "Nothing in this rule shall be construed as permitting communication of classified information in an unauthorized manger or for improper gains to a Government servant or others".

Justice K. Sukumaran in his article, "File Notings Important" in *Times of India* (Aug. 24, 2006) rightly feels that no principled government official or political administrator should feel uncomfortable about his views being scanned by competent legal and administrative authorities. A person dealing with public matters should have the humility to accept other points of view, reached after informal discussion and argument."

Hari Jaisingh in his article , "A Question of Judicial Dharma" in the daily Tribune dated September 11, 2002 has warned about consequences of bad governance. A serious crisis of credibility has gripped the instruments of governance, including the administration of justice, amidst scams, scandals, cover-up operations and communication gaps at all levels. This is true of the entire country, especially of Punjab, which in recent times has been under the spell of what has come to be broadly known as the Punjab Public Service Commission scam. Why and how such a massive money for Job racket could have survived and thrived is a matter of shame that requires soul-searching as well a through probe with a strong political will to revamp and cleanse the system.

This is not a fill-in-the-blank rhetoric. This has to be article of faith on the part of all those who have anything to do with the instruments of governance, the judiciary included. This can be done only if each power-holder plays his or her legitimate role sincerely,

honestly and in a responsible manner. Each organ has to conduct itself with determination, dignity and sobriety not only for the sake of survival today but also for the legacy it leaves for the youth who are the future of the country and the flag-bearers of its rich conversational values and traditions. There are no easy escape routes. What has to be kept in mind, as enshrined in the holy books and scriptures, is that there is a divine court above which also expects transparency in justice and the enforcement of judicial ethics and accountability.

The Test of Good Governance is to promote the physical, social and spiritual development of the people through their participation and involvement.

God has created the universe with all facilities essential for people. It is a place to enjoy bliss as well as necessary material comforts. Human beings in Government and Politics are expected to conduct their affairs in such a way, especially through good governance, so as to achieve the full benefits of joy of living –

Diffusing glory with your rays,
You have scaled the shining realm of heaven.
By you are supported all things that are,
O God All Creator, essence all-divine.[4]

Carl Sagan in his magnificent, awe inspiring work Cosmos has described human predicament and dilemmas that surround us in the most though provoking manner: “The earth is a lovely and more less placid place. Things change, but slowly. We can lead a full life and never personally encounter a natural disaster more violent, than a storm. And so we become complacent, relaxed, unconcerned. But in the history of Nature, the record is clear. Worlds have been devastated. Even we humans have achieved the dubious technical distinction of being able to make our own disasters, both intentional and inadvertent. On the landscapes of other planets where the records of the past have been preserved there is abundant evidence of major catastrophes. It is all a matter of time scale. An event that would be unthinkable in a hundred years may be inevitable in a hundred million.

Our lovely blue planet, the Earth, is the only home we know. Venus is too hot. Mars is too cold. But the Earth is just right, a heaven for humans. After all, we evolved here. But our congenial climate may be unstable. We are perturbing our poor planet in serious and contradictory ways. Is there any danger of driving the environment of the earth towards the planetary Hell of Venus or the global ice age of Mars? The simple answer is that nobody knows. The study of the global climate, the comparison of the Earth with other worlds, are subjects in their earliest stages of development. They are fields that are poorly and grudgingly funded. In our ignorance, we continue to push and pull, to pollute the atmosphere and brighten the land, oblivious of the fact that the long-term consequences are largely unknown.

A few million years ago, when human beings first evolved on Earth, it was already a middle aged world, 4.6 billion years along from the catastrophes and impetuosities of its youth. But we humans now represent a new and perhaps decisive factor. Our intelligence and our technology have given us the power to affect the climate. How will we use this power? Are we willing to tolerate ignorance and complacency in matters that affect the entire human family? Do we value short-term advantages above the welfare of the Earth? Or will we think on longer time scales, with concern for our children and our grandchildren, to understand and protect the complex life-support system of our planet? The Earth is a tiny and fragile world. It needs to be cherished.

The discipline to keep this universe in equilibrium wherein all people can enjoy a decent life, both physical and spiritual, is known as Public Administration. Let us understand its meaning and purpose. Public administration in the modern sense is of recent origin, i.e. it was coined by Woodrow Wilson in 1887 but its existence can be seen in the ancient Sanskrit literature in a more refined and purposeful sense. The word 'administer' is derived from the Latin words 'ad' and 'ministrare', meaning 'to minister to', 'to serve' or 'to manage'. In the words of Woodrow Wilson, “Public administration is detailed and systematic application of law. Every application of law is an act of administration.”[5] According to E.N. Gladden, administration means…..”to care for, or look after people, to manage affairs is determined action taken in pursuit of conscious purpose.”[6] Nigro observes: “administration is the organization and use of men and materials to accomplish a purpose.”[7]

To while, “the art of administration is the direction, co-ordination and control of many persons to achieve some purpose or objective.”[8]

The Government in India, both at the centre and the states, share the concern for ensuring responsive, accountable, transparent, decentralized and people-friendly administration at all levels. There is, however, considerable frustration and dissatisfaction amongst the people, especially the weaker sections of society, about the apathy, irresponsiveness and lack of accountability of public servants, even as the expenditure on staff continues to increase. There is increasing anxiety about growing instances of corruption and criminalization in public life and administration. The people, particularly the vulnerable groups, are also greatly concerned about the deterioration in the performance of agencies concerned with law and order and the investigation of offences and social welfare. Their faith in the registration of offences, their timely investigation and the delivery of prompt justice has been eroded.

Reference

1. Prabhat Kumar, A Responsive and Effective Government in Management in Government, A Journal of Administrative Reforms, January-March 2000, p. 2

2. B.B. Tondon : Quality in Government, pp. 8-9, Ibid.
3. V.K. Agnihotir and B.V.R. Subrahmanyam, "Quality in Government" in Management in Government, Oct.-Dec. 1999, p. 4
4. Parmundo Punniker, The Vedic Experience, Mantra Manjari, London, Darton, Longman and Todd, 1977, pp. 312-15.
5. Woodrow Wilson, The Study of Public Administration, Political Science Quarterly, 1941, pp. 481-566 also in the Political Science Quarterly, Vol. 2, pp. 197-222, June 1887.
6. E.N. Gladden, "An Introduction to Public Administration, "Staples Press, London, 1949, p. 17
7. E.A. Nigro, Public Administration, Readings and Documents, New York, Rinehart and Co. Inc., 1951.
8. L.D. White, Introduction to the Study of Public Administration, Macmillian, 1955, p.4

सिद्धांत

DOCTRINE

त्रैमासिक शोध जर्नल

सदस्यता फार्म

नाम ....

पिता / पति का नाम ....

शैक्षिक योग्यता एवं पद ....

जन्मतिथि ....

पता : विद्यालय / यूनिवर्सिटी / संस्थान ....

....

आवास ....

....

फोन नं0 / मोबाइल नं0 ....

ई–मेल ....

सहयोग राशि (नकद / मनीआर्डर / ड्राफ्ट / चेक) ....

तिथि .... हस्ताक्षर ....

(सदस्यता फार्म की छाया प्रति स्वीकार्य है)